सद्गुरु — 129
गुरु Characteristics —
269, 271, 277, 279
287, 289, 294

108
3 Chapt
352
460

श्रीगुरुगीता

*

—: अनुवादक :—

श्री स्वामी रामेश्वरानन्द पुरी

*

—: प्रकाशक :—

श्री पुरुषोत्तमानन्द ट्रस्ट

वशिष्टगुहा आश्रम

पो०—गूलर दोगी

जि० - टिहरी गढ़वाल, (यू० पी०)

॥ श्रीगुरुगीता ॥

●

अनुवादक—

श्री स्वामी रामेश्वरानन्द पुरी

●

प्रकाशक—

श्री पुरुषोत्तमानन्द ट्रस्ट

वशिष्टगुहा आश्रम

पो०—गूलर दोगी

जि०—टिहरी गढ़वाल, (यू० पी०)

१९७८

पुरुषोत्तमानन्दस्तोत्रपञ्चकम्

(स्वामी ज्ञानानन्दसरस्वती शिवानन्दनगरम्)

देवकीतनयनामजालजपलालसं मुदितमानसं ।
देवतार्हणपरायणं परिणतात्मबोधममलाशयम् ।
देहिनाँ भुवनवासिनां भविककारिणं मुनिवरं महा-
देवतुल्यपुरुषोत्तमाख्यमभिवादये महितयोगिनम् ।१।

वर्णनीयविविधावदानमवलेपलेशरहितं ज्वलद्-
वर्चसं वशगताखिलाद्भुतविशिष्टसिद्धिविभवोत्करम् ।
वन्दनीयमुनिपुङ्गवं सकलनन्दनीयमतिवैभवं ।
वल्गुहासलसिताननं सततमानतोऽस्मि पुरुषोत्तमम् ।२।

वाणीवैभवरञ्जिताखिलजनं दीनावलम्बं कृपा-
वाराशिं वशिनं विशेषविदुषामग्रेसरं श्रीकरम् ।
वाञ्छाहीनमहीनशायिकरुणापीयूषधारोत्करा-
वापं श्रीपुरुषोत्तमाख्ययमिनं वन्दे गुरूणां गुरुम् ।३।

नन्दनन्दनकलेवरं सततसुन्दरं हृदि विलोकयन् ।
नन्दनीयसुगुणाकरः सकलवन्दनीयपदपङ्कजः ।
नन्दिताखिलसुधीजनः सुजनपूजितो मुनिवरः सदा-
नन्दमूर्तिरनिशं ममास्तु शरणं महान् स पुरुषोत्तमः ।४।

दत्ताम्नायनिगूढतत्त्वनिकरं लोकाय शोकापहं ।
दत्तात्रेयसमानबुद्धिविभवं विख्यातयोगीश्वरम् ।
दग्धाज्ञानवनं समस्तजगतां सम्मानितं मङ्गलो-
दन्तं श्रीपुरुषोत्तमं यमिवरं वन्दे जगद्वेशिकम् ।५।

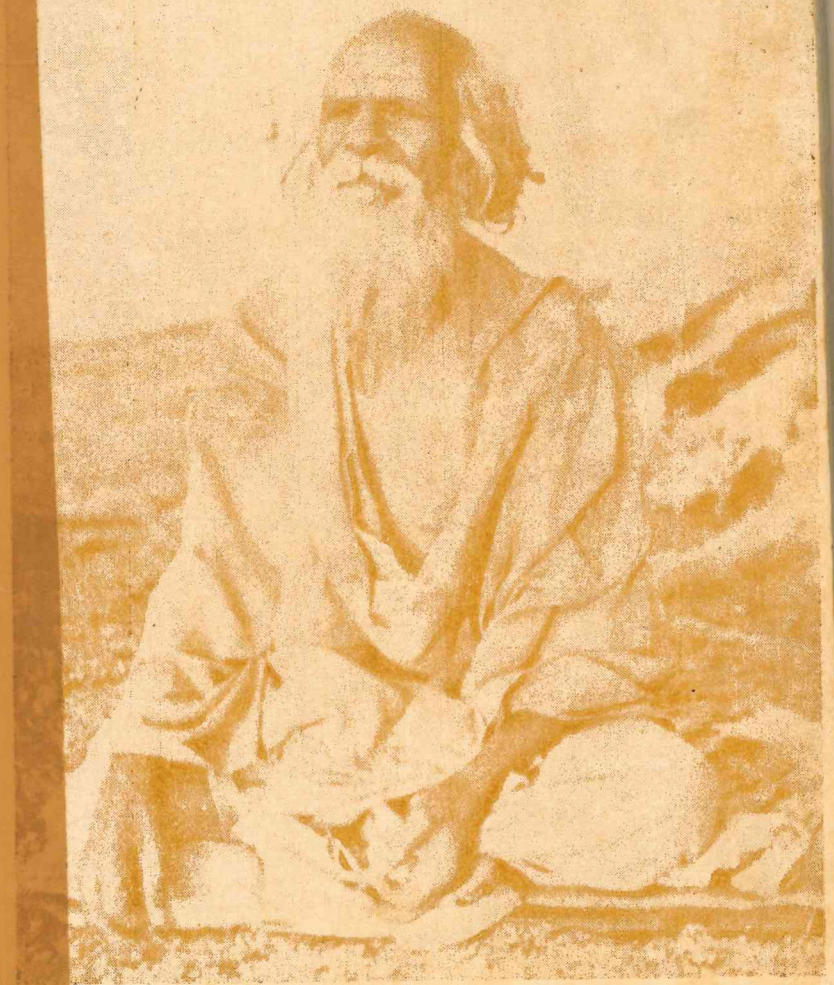

श्री १००८ पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज, वशिष्ट गुहा (हिमालय)

॥ ॐ ॥

प्राक्कथन

महान् भक्तिभावी श्री आर० के० मूर्ति द्वारा पूज्य गुरु महाराज स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी को 'गुरुगीता' नामक पुस्तक, जिसमें स्कन्दपुराण से उत्तराखण्ड-सम्बन्धी तीन अध्याय उद्धृत किये गये हैं, सादर समर्पित की गयी। गुरु महाराज के परम शिष्य स्वामी रामेश्वरानन्द जी द्वारा 'गुरुगीता' का हिन्दी-भाषा-टीका में रूपान्तर कर अपने श्रद्धालु भक्तों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अतीव प्रसन्नता हो रही है।

प्रस्तुत पुस्तक 'गुरुगीता' का विमोचन पूज्य गुरुदेव १००८ श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज के त्याग, तपस्या एवं प्रगाढ़ तेज के प्रतीक स्वामी जी महाराज (वशिष्ठ-गुहा) की पुण्य-स्मृति में किया जा रहा है जिनका पदार्पण इस पुण्य-भूमि में २३ नवम्बर, १८७९ को त्रावनकोर के तिरुवल्ला नामक नगर में नायर परिवार में हुआ। संसार में भौतिक कष्टों की लिप्तता से परिमार्जित होने के लिए गुरु महाराज ने श्रीरामकृष्णमिशन के प्रथम प्रेसिडेण्ट परम पावन स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज से मन्त्रदीक्षा तथा महापुरुष श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज से संन्यास की दीक्षा ग्रहण की।

स्वामी जी का सम्पूर्ण समय गीता, भागवत आदि पावन ग्रन्थों के स्वाध्याय में ही व्यतीत हुआ। गुरु महाराज सन् १९२८ में माँ गङ्गा के पवित्र तट वशिष्ठ-गुहा, गूलर दोगी में आकर तपस्या करने लगे। स्वामी जी ने यहां भव्य तपस्या का केन्द्र बनाया। अन्त में गुरु महाराज १३ फरवरी, १९६१ में अपनी दिव्य आभा को लेकर परमपद को प्राप्त हो गये।

'गुरुगीता' में पार्वती-परमेश्वर संवाद की भव्य छटा समायोजित है। गुरुदेव स्वामी श्री पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज इस पुस्तक को अत्यन्त पसन्द करते थे; अतः इसका पाठ गुरुपूर्णिमा, गुरु महाराज के जन्म-दिन तथा महा शिवरात्रि के सुअवसर पर वशिष्ठ-गुहा में किया जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक 'गुरुगीता' में गुरु की असीम अगोचर महिमा का साङ्गोपाङ्ग वर्णन किया गया है। गुरु भौतिक तथा आध्यात्मिक एवं धार्मिक जगत् में सर्वोपरि पद प्राप्त करता है लेकिन सीमा यह है कि गुरु के आचरण एवं गरिमा को किसी भी प्रकार की कालिमा से मुक्त दुग्ध-धवल होना चाहिए। परब्रह्म परमेश्वर तक सही मार्ग दर्शित करने का मुख्य साधन गुरु ही हैं। शिष्य को भी उपदेश-ग्रहण का उपयुक्त पात्र बनकर गुरु की सेवा में उपस्थित होना चाहिए। हम सबका प्रथम पावन कर्त्तव्य यही है कि हम प्रकाश-पुञ्ज गुरु को नमन करें। मुझे पूर्ण आशा एवं विश्वास है कि स्नेही पाठक 'गुरुगीता' का अध्ययन कर गुरु-पद को हृदयङ्गम करने का प्रयास करेंगे। जीवन अन्धकारमय है, उसे गुरु ही प्रकाशित करता है।

गुरु महाराज स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी के श्रद्धालु भक्तों ने 'गुरुगीता' के हिन्दी-भाष्य-टीका-अनुवाद की असीम अभिलाषा व्यक्त की। इस कार्य के सम्पादन के लिए हमने गुरु महाराज के परम शिष्य श्री स्वामी रामेश्वरानन्द पुरी जी महाराज से विनम्र आग्रह किया कि आप 'गुरुगीता' की हिन्दी-भाषा-टीका कर हमारे भक्तों की ज्ञान-पिपासा को शान्त करने की यथेष्ट कृपा करने का कष्ट करें। उन्होंने (स्वामी रामेश्वरानन्द जी पुरी ने) हमारी विनती स्वीकार की और तत्काल ऋषिकेश में श्री केरलाश्रम में निवास कर अपना अमूल्य समय देकर 'गुरुगीता' का हिन्दी-रूपान्तर किया। हम उनके इस पुण्य-कृत्य के लिए आजीवन आभार प्रकट करते रहेंगे। हम इस पुस्तक का रसास्वादन कर स्वामी श्री रामेश्वरानन्द जी को भावभीनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

इस पावन पुस्तक के मुद्रण हेतु सम्पूर्ण आर्थिक सहायता देने का वचन श्री सीताराम श्रीवास्तव तथा उनके सुपुत्र श्री एच० के० श्रीवास्तव ने दिया है। मैं गुरु महाराज की ओर से उन्हें शुभ आशीर्वाद प्रेषित करना नैतिक कर्त्तव्य समझता हूँ।

पुस्तक की कम्पोज़िंग में हुई छापे की अशुद्धियों का संशोधन श्री स्वामी ज्ञानानन्द जी महाराज, शिवानन्दाश्रम, टिहरी-गढ़वाल ने अपने अथक प्रयास से किया है। स्वामी ज्ञानानन्द जी महाराज ने वशिष्ठ-गुहा के संस्थापक पूज्य गुरु महाराज स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी की यशोकीर्ति से सम्बन्धित पाँच भव्य श्लोकों की रचना 'गुरुगीता' पुस्तक के लिए की है। स्वामी ज्ञानानन्द जी महाराज के इस श्रेष्ठतम कार्य तदर्थ मैं हार्दिक अनुग्रहीत हूँ।

श्री किशोर प्रिन्टर्स, ऋषिकेश ने जिस कार्य-कुशलता से 'गुरुगीता' का मुद्रण किया है उसके लिए मैं उनके प्रति आभार अभिव्यक्त करता हूँ तथा गुरु महाराज की ओर से आशीर्वाद अभिव्यक्त करता हूँ।

'गुरुगीता' का विमोचन श्लाघनीय पवित्र भावना से किया जा रहा है। मैं श्रद्धालु भक्तों एवं पाठकों से यह अपेक्षा रखता हूँ कि वे इस पुस्तक का गहन अध्ययन कर गूढ़ भावों का मन्थन कर अपनी ज्ञान-पिपासा को बुझाने में समर्थ होंगे। मुझे दृढ़ आशा है कि पाठक इस 'गुरुगीता' की लावण्यता का अनुभव कर गुरु-पद एवं महिमा के मृदु सन्देश को जन-जन तक पहुँचाकर हमें कृतार्थ करेंगे एवं आध्यात्मिक आनन्द की अनुभूति करेंगे।

स्वामी चैतन्यानन्द
वशिष्ठ-गुहा आश्रम,
पो० गूलरदोगी,
वाया—शिवानन्दनगर
जिला—टिहरी-गढ़वाल, उ०प्र० (भारत)।

सद्गुरु

'गुरु' शब्द की उत्पत्ति दो अक्षरों से है। 'गु' जिसका अर्थ है अन्धकार और 'रु' जिसका अर्थ है दूर करने वाला। 'गुरु' अन्धकार को दूर करने वाला है। सभी सांसारिक गुरुजन एक प्रकार से अन्धकार को दूर करने वाले हैं। वे निम्न लोकों की वस्तुओं का ज्ञान प्रदान करते हैं। सद्गुरु भी अन्धकार को दूर करने वाले हैं; परन्तु वे अविद्या के अन्धकार को दूर करने वाले हैं और साधक को 'सत्' अर्थात् सृष्टि के अन्तिम सत्य का ज्ञान प्राप्त कराने में सहायता पहुँचाते हैं। किसी विज्ञान या कला का अध्ययन करते समय हमें उस व्यक्ति के मार्ग-प्रदर्शन में रहना पड़ता है जो उस विज्ञान या कला का ज्ञाता है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए अध्यात्म जीवन के मार्ग पर चलना चाहता है तो उसे सद्गुरु के मार्ग-प्रदर्शन पर चलना होगा जो स्वयं मार्ग पर चल चुका हो और सत्य को प्राप्त कर चुका हो। केवल वही गुरु जो भगवान् को जानता है, तुमको भगवान् से प्रेम करना और प्रेम के द्वारा उस भगवान् को जानना सिखा सकता है। तुमको उन लोगों के पास जाना होगा जिन्होंने दिव्य-प्रेम की मदिरा छककर पी ली है और जो अपने स्वयं के अनुभव से तुमको भगवान् के बारे में बता सकते हैं। ऐसा गुरु भले ही सामान्य मनुष्य की तरह दिखायी दे; परन्तु यथार्थ में वह मानवता के परे है। संसार के प्रति सहानुभूति होने के कारण न कि अपने लिए वह बाह्य जगत् में सब प्रकार के कार्यों में रत हो सकता है। उसे न कुछ खोना है, न कुछ पाना है। वह तो स्वयमेव मुक्त है। वह भगवान् या ब्रह्म बन गया है। ऐसे मानवरूपी भगवान् का चेला बनना कितने सौभाग्य की बात है! ऐसा गुरु आध्यात्मिक दृष्टि से सोये हुए मनुष्य को जगा सकता है; परन्तु यह तभी सम्भव है जब वह मनुष्य गुरु के उपदेशों का पालन करे। वह ऐसे हजारों मनुष्यों के हृदयों में ज्ञान-दीप जला सकता है जो अधिकारी हैं। वह कई जन्मों की संचित वासनाओं को उसी प्रकार जला सकता है जिस प्रकार जलती हुई दियासलाई लकड़ी की ढेरी को जला सकती सकती है; परन्तु ऐसा गुरु दुर्लभ है।

दुर्लभं त्रयमेवैतद्देवानुग्रहहेतुकम्।
मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुषसंश्रयः॥

जब साधक सच्चे हृदय से खोज करता है और भगवान् को पाने की तीव्र इच्छा रखता है तभी ऐसे गुरु की प्राप्ति होती है। वास्तव में भगवान् ही गुरु के रूप में मिलते हैं। भगवान् केवल प्रेम से आकर्षित होते हैं। वे केवल प्रेम से बंधे हैं, अन्य किसी बन्धन से नहीं।

ऐसे महापुरुष के सम्पर्क से पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए साधक को कुछ बातें याद रखनी चाहिए जो गुरु-चेला के सम्बन्ध में बड़ी महत्वपूर्ण हैं।

सर्वप्रथम चेला को अपने गुरु में पूर्ण श्रद्धा रखनी चाहिए। उसे चाहिए कि वह गुरु को ही एकमात्र मार्ग-प्रदर्शक माने। उसे चाहिए कि वह एक गुरु से दूसरे गुरु के पास न भागे जैसा कि कई साधकों की आदत होती है। यदि किसी व्यक्ति को जल प्राप्त करने के लिए कुआँ खोदना है तो उसे चाहिए कि चुने हुए स्थान पर ही ध्यान जमावे और दृढ़ निश्चयपूर्वक खोदता जाय जब तक कि वह जल तक नहीं पहुँच जाता। यदि वह बार-बार स्थान बदलता और भिन्न-भिन्न स्थानों पर खोदता जाय तो उसे कभी भी जल नहीं मिलेगा। यह सत्य है कि प्रारम्भिक अवस्था में चेला अपने गुरु की महानता नहीं जानता; क्योंकि वह स्वयं अविकसित रहता है; परन्तु जब वह श्रद्धा व भक्तिपूर्वक अपने गुरु की सेवा करता है,

और ज्यों-ज्यों उसके अन्तःचक्षु खुलते जाते हैं त्यों-त्यों वह गुरु की वास्तविक शक्तियों, प्रेम एवं ज्ञान का अपरोक्ष एवं वास्तविक ज्ञान प्राप्त करता जाता है। तब उसकी गुरुभक्ति श्रद्धा पर नहीं बल्कि स्वयं के अनुभव पर निर्भर रहती है और उसे कोई भी शक्ति विचलित नहीं कर सकती। परन्तु इस स्थिति तक पहुँचने के लिए श्रद्धा की आवश्यकता है, सम्पूर्ण हृदय से की गयी भक्ति की आवश्यकता है, सेवा की आवश्यकता है, गुरु पर पूर्ण निर्भरता, गुरु की अनन्यता की आवश्यकता है। तुम्हें अपने गुरु पर पूर्ण विश्वास होना चाहिए और तुम्हारे पास जो कुछ भी है उसे गुरु को समर्पण करना चाहिए। तुम्हें अपने हृदय के सभी दरवाजे उनके लिए पूर्णतया खुले रखना चाहिए और उनसे कुछ भी छिपाकर या गुप्त नहीं रखना चाहिए। जब कमरा खुला हो तभी सूर्य उसे प्रकाशित कर सकता है। वह उस कमरे को कैसे प्रकाशित कर सकता है जिसमें उसकी किरणों का प्रवेश ही नहीं होता। यही कारण है कि सभी महान् गुरुओं ने भक्ति और सेवा पर बड़ा ज़ोर दिया है; परन्तु सेवा सम्पूर्ण हृदय से की गयी सत्य, पवित्र और निष्कपट होनी चाहिए। जहाँ चेला का दृष्टिकोण ठीक हुआ वहाँ वह धीरे-धीरे दृढ़ता से परन्तु अविराम गति से बदलता जाता है और अधिकाधिक अपने गुरु के समान बनता जाता है, जो मनुष्य के रूप में भगवान् हैं।

गुरु-चेला के सम्बन्ध में दूसरी सबसे महत्वपूर्ण वस्तु है व्यक्तिगत सम्पर्क। हिन्दुओं की पौराणिक कथाओं में पारस पत्थर का वर्णन मिलता है जो ताँबा को सोना बना देता है। परन्तु पत्थर को ताँबे का स्पर्श करना ही पड़ता है। दोनों को अलग-अलग रखने से फल-प्राप्ति नहीं होती। अतः गुरु और चेला का सम्पर्क या सत्संग आवश्यक है। तब चेला सोना नहीं बल्कि पारस ही बन जाता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि केवल शारीरिक सम्पर्क आवश्यक नहीं है; बल्कि हृदय और मन का सम्पर्क ही चेला में परिवर्तन ला सकता है। गुरु के प्रति चेला के दृष्टिकोण-भाव पर ही शक्ति का प्रवाह निर्भर है। केवल श्रद्धा और प्रेम ही आवश्यक नहीं हैं, परन्तु आज्ञापालन और निष्काम सेवा भी आवश्यक हैं। चेला को यह अवश्यमेव अनुभव करना चाहिए कि उसे जो कुछ मिल रहा है और आध्यात्मिक मार्ग पर वह जो कुछ उन्नति कर रहा है वह सब गुरु की अपार कृपा का फल है। मतभेद होने से कुछ नहीं बिगड़ता। यहाँ तक कि यदि शिष्य को विश्वास हो कि वह सिद्धान्त के लिए लड़ रहा है तो विरोध होने से भी कोई हानि नहीं। दयालु सद्गुरु इसे समझ जावेंगे और बुरा नहीं मानेंगे। उलटे वे यह जानकर प्रसन्न होंगे कि चेले में सत्य के लिए लड़ने का साहस है। परन्तु निष्कपटता, सच्चाई एवं सही कार्य करने के लिए दृढ़ता की नितान्त आवश्यकता है।

लोगों के मन में गुरु-कृपा के सम्बन्ध में कुछ भ्रान्त धारणाएं हैं। यह सत्य है कि आध्यात्मिकता गुरु से चेला तक ठीक उसी प्रकार पहुँचाई जा सकती है जिस प्रकार संपत्ति एक धनवान् व्यक्ति से निर्धन व्यक्ति तक पहुँचाई जाती है; परन्तु यह पहुँचाने का कार्य अचानक या मनमाना नहीं होता जो केवल चेला के माँगे जाने पर ही निर्भर हो। चेला को अपनी मुक्ति के लिए स्वयं प्रयत्न करना पड़ता है। गुरु-कृपा पाने की कामना रखने के पहले उसे आवश्यक गुणों का विकास करना ही पड़ता है। वास्तव में गुरु-कृपा शिष्य के प्रयत्नों का फल है। प्रयत्न का अर्थ केवल सेवा के ठोस कार्यों को करना ही नहीं है; परन्तु इसमें उचित भावना का विकास करना भी शामिल है जैसे आत्मसमर्पण। आत्मसमर्पण कोई अभावात्मक गुण नहीं है जैसा कि लोग प्रायः समझते हैं। इसमें प्रचण्ड शक्ति भरी है और इसके लिए महान् और अटूट प्रयत्न की आवश्यकता है; परन्तु यह साधना के क्षेत्र में अन्य साधनों की तरह गुरु-कृपा से प्राप्त हो सकता है। गुरु-कृपा और उसके प्रवाह के स्वभाव को समझने के लिए हमें जल-प्रवाह के उदाहरण को समझना होगा। पानी हमेशा ऊंचे स्थान से नीचे स्थान की ओर बहता है, उलटी दिशा में कभी नहीं बहता। अतः विनम्रता, दीन-भाव का होना

परमावश्यक है। यदि कोई शक्ति की परवाह नहीं करता अथवा आत्म-समर्पण का सही भाव नहीं अपनाता तो शक्ति कैसे प्रवाहित हो सकती है ? यदि दीन-भाव हो तो दूसरी सब चीजें आप-से-आप आती हैं; यहाँ तक कि बाधाएं भी हटा दी जाती हैं। अतः शिष्य को पहले योग्य बनना चाहिए, फिर किसी चीज की इच्छा करनी चाहिए। योग्यता आवश्यक है। प्रशिक्षण आवश्यक है। यहां तक कि सद्गुरु की प्राप्ति भी किसी के कर्मों पर निर्भर है। कई लोगों को सन्देह होता है कि केवल गुरु पर श्रद्धा रखने से काम चल सकता है या नहीं ? वे इस बात से भयभीत होते हैं कि कोई उन्हें लूट न ले अथवा उन्हें गलत रास्ता न बतावे। यद्यपि सामान्य गुरु द्वारा किसी व्यक्ति के लूट लिये जाने की सम्भावना है फिर भी हमें यह स्मरण रखना आवश्यक है कि हम एक ऐसे संसार में निवास करते हैं जिसका संचालन नियम से होता है और हम प्रायः वही पाते हैं जिसके हम योग्य होते हैं। यदि कोई साधक पूर्ण रूप से निष्कपट हो और भगवान् को पाने की तीव्र इच्छा रखता हो तो इसकी बहुत कम सम्भावना है कि वह किसी धोखेबाज मनुष्य के हाथ में पड़ जाय। घटनाएं अचानक नहीं होतीं, बल्कि वे कर्म के नियम के अनुसार होती हैं जो सबका नियंत्रण करता है। यदि साधक में सच्ची लगन हो और अपने गुरु में अपार श्रद्धा रखता हो तो वह अपने गुरु से अपनी सभी आवश्यक चीजें प्राप्त करने में सफल होगा, भले ही लोगों के दृष्टिकोण से गुरु उसे सहायता पहुँचाने में असमर्थ हों; क्योंकि सभी सहायताएं वस्तुतः भगवान् से प्राप्त होती हैं और भगवान् ही उसकी आवश्यकतानुसार उसकी सहायता करेगा, भले ही उसका साधन (जरिया) आदर्श न हो। इसके सिवा, ज्यों-ज्यों हमारा मन अधिकाधिक पवित्र होता जाता है त्यों-त्यों हमारे विवेक की शक्ति बढ़ती जाती है और विवेकपूर्ण मन से हमारे लिए किसी अयोग्य व्यक्ति को गुरु चुनना सम्भव नहीं। प्रायः केवल विवेकहीन लोगों को ही अविवेकी गुरु मिलते हैं। साधकों के सामने जो दूसरी कठिनाई उपस्थित होती है वह है गुरु और इष्टदेव में भक्ति का बंटवारा। साधक को भगवान् में भक्ति रखनी चाहिए या गुरु में, या दोनों में ? इस विषय में शिष्य को एकमात्र गुरु के उपदेशों के अनुसार ही चलना चाहिए और ठीक वही कार्य करना चाहिए जो उसके गुरु कहें। चेला के स्वभाव और उसमें विद्यमान शक्तियों को गुरु-चेला की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह जानता है और यद्यपि गुरु के उपदेश कड़ुवे लगें या उचित न जान पड़ें तथापि अन्त में यही सिद्ध होगा कि वे उन परिस्थितियों में सर्वोत्तम थे। इसके अतिरिक्त इष्टदेवता और गुरु में अलग-अलग भक्ति रखने की कठिनाई उन दोनों के स्वभाव और आपस में सम्बन्ध की जानकारी न रखने पर आधारित है। वस्तुतः उन दोनों में कोई भिन्नता नहीं। सद्गुरु इष्टदेवता का स्वरूप ही है और इसी प्रकार उसे मानना भी चाहिए। तब भक्ति की भिन्नता का प्रश्न ही नहीं उठेगा। हम पत्थर की मूर्तियों में भगवान् की पूजा करते हैं। फिर हम गुरु की जीती-जागती प्रतिमा में पूजा क्यों नहीं कर सकते ? भगवान् हमारा सम्पूर्ण हृदय चाहते हैं। 'भावप्रियो हि माधवः।' तुम किसी भी प्रकार से उसकी पूजा कर सकते हो; परन्तु तुम्हें अपने सम्पूर्ण हृदय से उसकी पूजा करनी चाहिए।

—●—

॥ श्री ॥

अथ दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम्

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं ।
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्वमत्स्यादिलक्ष्यम् ।।
एकं नित्यं विमल-मचलं सर्वधीसाक्षिभूतं ।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ।१।
विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजान्तर्गतं ।
पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिवोद्भूतं यथा निद्रया ।।
यः साक्षात्कुरुते प्रबोधसमये स्वात्मानमेवाद्वयं ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।२।
बीजस्यान्तरिवाङ्कुरो जगदिदं प्राङ्निर्विकल्पं पुनः ।
मायाकल्पितदेशकालकलनावैचित्र्यचित्रीकृतम् ।।
मायावीव विजृम्भयत्यपि महायोगीव यस्स्वेच्छया ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।३।
यस्यैव स्फुरणं सदात्मकमसत्कल्पार्थकं भासते ।
साक्षात्तत्त्वमसीति वेदवचसा यो बोधयत्याश्रितान् ।।
यत्साक्षात्करणाद्भवेन्न पुनरावृत्तिर्भवाम्भोनिधौ ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।४।
नानाच्छिद्रघटोदरस्थितमहादीपप्रभाभास्वरं ।
ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरणद्वारा बहिः स्पन्दते ।।
जानामीति तमेव भान्तमनुभात्येतत्समस्तं जगत् ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।५।
देहं प्राणमपीन्द्रियाण्यपि चलां बुद्धिं च शून्यं विदुः ।
स्त्रीबालान्धजडोपमास्त्वहमिति भ्रान्ता भृशं वादिनः ।।
मायाशक्तिविलासकल्पितमहाव्यामोहसंहारिणे ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।६।
राहुग्रस्तदिवाकरेन्दुसदृशो मायासमाच्छादनात् ।
सन्मात्रः करणोपसंहरणतो योऽभूत्सुषप्तः पुमान् ।।
प्रागस्वाप्समिति प्रबोधसमये यः प्रत्यभिज्ञायते ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।७।

बाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा सर्वास्ववस्थास्वपि ।
व्यावृत्तास्वनुवर्तमानमहमित्यन्तः स्फुरन्तं सदा ।
स्वात्मानं प्रकटीकरोति भजतां यो भद्रया मुद्रया ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।८।
विश्वं पश्यति कार्यकारणतया स्वस्वामिसम्बन्धतः ।
शिष्याचार्यतया तथैव पितृपुत्राद्यात्मना भेदतः ।।
स्वप्ने जाग्रति वा य एष पुरुषो मायापरिभ्रामितः ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।९।
भूरम्भाँस्यनलोऽनिलोऽम्बरमहर्नाथो हिमाँशुः पुमान् ।
इत्याभाति चराचरात्मकमिदं यस्यैव मूर्त्यष्टकम् ।।
नान्यत्किञ्चन विद्यते विमृशतां यस्म त्परस्माद्विभोः ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ।१०।
सर्वात्मत्वमिति स्फुटीकृतमिदं यस्मादमुष्मिन् स्तवे ।
तेनास्य श्रवणात्तदर्थमननाद्ध्यानाच्च सङ्कीर्तनात् ।।
सर्वात्मत्वमहाविभूतिसहितं स्यादीश्वरत्वं स्वतः ।
सिद्ध्येत्तत्पुनरष्टधा परिणतं चैश्वर्यमव्याहतम् ।११।
वटविटपिसमीपे भूमिभागे निषण्णं ।
सकलमुनिजनानां ज्ञानदातारमारात् ।
त्रिभुवनगुरुमीशं दक्षिणामूर्तिदेवं ।
जननमरणदुःखच्छेददक्षं नमामि ।१२।
चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धा शिष्या गुरुर्युवा ।
गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिश्यास्तु च्छिन्नसंशयाः ।१३।
ॐ नमः प्रणवार्थाय शुद्धज्ञानैक मूर्तये ।
निर्मलाय प्रशान्ताय दक्षिणामूर्तये नमः ।१४।
निधये सर्वविद्यानां भिषजे भवरोगिणां ।
गुरवे सर्वलोकानां दक्षिणामूर्तये नमः ।१५।
मौनव्याख्याप्रकटितपरब्रह्मतत्त्वं युवानं ।
वार्षिष्ठान्ते वसदृषिगणैरावृतं ब्रह्मनिष्ठैः ।
आचार्येन्द्रं करकलितचिन्मुद्रमानन्दमूर्तिं ।।
स्वात्मारामं मुदितवदनं दक्षिणामूर्तिमीडे ।१६।

।। इति श्रीशङ्कराचार्यविरचितं दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ।।

।। ॐ ।।

श्रीगणेशशारदासद्गुरुमङ्गलमूर्तिभ्यो नमः ।।

यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरुषं तथाऽन्ये ।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्ननिवारणाय ।।
ओं अस्य श्रीगुरुगीतामालामन्त्रस्य भगवान् सदाशिव ऋषिः ।
विराट् छन्दः । श्रीगुरुपरमात्मा देवता । हं बीजम् । सः शक्तिः
सोऽहं कीलकम् । श्रीगुरुकृपाप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।।

अथ करन्यासः ।।

ओं हं सां सूर्यात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ओं हं सीं सोमात्मने तर्जनीभ्यां नमः ।
ओं हं सूं निरञ्जनात्मने मध्यमाभ्यां नमः ।
ओं हं सैं निराभासात्मने अनामिकाभ्यां नमः ।
ओं हं सौं अतनुसूक्ष्मात्मने कनिष्ठिकाभ्यां नम ।
ओं हं सः अव्यक्तात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

इति करन्यासः ।।

अथ हृदयादिन्यासः ।

ओं हं सां सूर्यात्मने हृदयाय नमः ।
ओं हं सीं सोमात्मने शिरसे स्वाहा ।
ओं हं सूं निरञ्जनात्मने शिखायै वषट् ।
ओं हं सैं निराभासात्मने कवचाय हुम् ।
ओं ह सौं अतनुसूक्ष्मात्मने नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ओं हं सः अव्यक्तात्मने अस्त्राय फट् ।।

इति हृदयादिन्यासः ।।

अथ ध्यानम् ।

हंसाभ्यां परिवृत्तपत्रकमलैर्दिव्यैर्जगत्कारणं
विश्वोत्कीर्णमनेकदेहनिलयं स्वच्छन्दमानन्दकम् ।
आद्यन्तैकमखण्डचिद्घनरसं पूर्णं ह्यनन्तं शुभं
प्रत्यक्षाक्षरविग्रहं गुरुपदं ध्यायेद्विभुं शाश्वतम् ।१।
विश्वव्यापिनमादिदेवममलं नित्यं परं निष्कलं ।
नित्योद्बुद्धसहस्रपत्रकमले लुप्ताक्षरे मण्डपे ।
नित्यानन्दमयं सुखैकनिलयं नित्यं शिवं स्वप्रभं ।
ध्यायेद्धंसपरं परात्परतरं स्वच्छन्दसर्वागमम् ।२।
ऊर्ध्वाम्नायगुरोः पदं त्रिभुवनोंकाराख्यसिंहासनं ।
सिद्धाचारसमस्तवेदपठितं षट्चक्रसञ्चारिणम् ।
अद्वैतस्फुरदग्निमेकममलं पूर्णं प्रभाशोभितं ।
शान्तं श्रीगुरुपङ्कजं भज मनश्चैतन्यचन्द्रोदयम् ।३।
नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम् ।
शिरसा योगपीठस्थं मुक्तिकामार्थसिद्धिदम् ।४।
प्रातः शिरसि शुक्लाब्जो द्विनेत्रं द्विभुजं गुरुम् ।
वराभयकरं शान्तं स्मरेत्तन्नामपूर्वकम् ।५।
प्रसन्नवदनाक्षं च सर्वदेवस्वरूपिणम् ।
तत्पादोदकजा धारा निपतन्ती स्वमूर्धनि ।६।
तया संक्षालयेद्देहे ह्यन्तर्बाह्यगतं मलम् ।
तत्क्षणाद्विरजो भूत्वा जायते स्फटिकोपमः ।७।
तीर्थानि दक्षिणे पादे वेदास्तन्मुखभक्षिताः ।
पूजयेदर्चितं तं तु तदमिध्यानपूर्वकम् ।८।
सहस्रदलपङ्कजे सकलशीतरश्मिप्रभं, वराभयकराम्बुजं विमल-
गन्धपुष्पाम्बरम् ।
प्रसन्नवदनेक्षणं सकलदेवतारूपिणं, स्मरेच्छिरसि हंसगं-
तदभिधानपूर्वं गुरुम् ।९।

इति ध्यानम् ॥

मानसोपचारैः श्रीगुरुं पूजयित्वा

लं पृथिव्यात्मने गन्धतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि ।

हं आकाशात्मने शब्दतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि ।

यं वाय्वात्मने स्पर्शतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि ।

रं तेज आत्मने रूपतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः तेजआत्मकं दीपं समर्पयामि ।

वं अपात्मने रसतन्मात्राप्रकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः अपात्मकं नैवेद्यकं समर्पयामि ।

सं सर्वात्मने सर्वतन्मात्राप्राकृत्यानन्दात्मने श्रीगुरुदेवाय नमः सर्वात्मकान् सर्वोपचारान् समर्पयामि ।

इति मानसपूजा ॥

अथ श्रीगुरुमालामन्त्रः ।।

ओं नमः श्रीगुरुदेवाय परमपुरुषाय सर्वदेवतावशीकराय सर्वारिष्टविनाशाय सर्वमन्त्रच्छेदनाय त्रैलोक्यं वशमानय स्वाहा ।।

ओ३म् ॥

ॐ श्रीगणेशशारदासद्गुरुभ्यो नमः ॥

श्रीगुर्वष्टोत्तरशतनामावलिः ॥

ॐ आनन्दवपुषे नमः
,, आचार्याय नमः
,, आदिमध्यान्तरहिताय नमः
,, दयानिधये नमः
,, सत्यज्ञानानन्तरूपाय नमः
,, सदाचाराय नमः
,, योगयोनये नमः
,, प्रज्ञानघनाय नमः
,, पञ्चकोशविलक्षणाय नमः
,, कोटिकन्दर्पसुन्दराय नमः
,, कृपावीक्षणाय नमः
,, अतनवे नमः
,, अनन्ताय नमः
,, अजाय नमः
,, इच्छानिच्छाविरहिताय नमः
,, अभोक्त्रे नमः
,, अद्वन्द्वाय नमः

ॐ अचिन्यात्य नमः
,, गुणत्रयविवर्जिताय नमः
,, गुहाशयाय नमः
,, ज्ञातृज्ञानज्ञेयसाक्षिणे नमः
,, निरञ्जनाय नमः
,, नित्यबुद्धाय नमः
,, अग्रगण्याय नमः
,, अक्षराय नमः
,, उदासीनाय नमः
,, उपदेष्ट्रे नमः
,, अमलाय नमः
,, ज्ञानदेशिकाय नमः
,, तत्त्वमस्यादिवाक्यार्थलक्ष्याय
[नमः
,, निष्कलाय नमः
,, तारकाय नमः
,, तत्त्वबोधकाय नमः

ॐ नित्यशुद्धाय नमः
,, नित्यमुक्ताय नमः
,, ज्ञानलिंगाय नमः
,, स्वयंप्रकाशाय नमः
,, जन्मजरामृत्युनिवारकाय नमः
,, निर्लेपाय नमः
,, अद्भुतचरित्राय नमः
,, अद्वेष्ट्रे नमः
,, ऊर्ध्वरेतसे नमः
,, सदसद्विरहिताय नमः
,, साधुगम्याया नमः
,, सर्वात्मने नमः
,, शान्ताय नमः
, अनन्तशक्तये नमः
,, निष्प्रपञ्चाय नमः
,, ईश्वराणामधीशाय नमः
,, वेदान्तवेद्याय नमः
,, षड्भिर्वर्जिताय नमः
,, षट्भावरहिताय नमः
,, अमृताय नमः
,, अन्तर्यामिने नमः
,, अपरिच्छेद्याय नमः
,, क्षमिणे नमः
,, कूटस्थाय नमः
,, कैवल्यदायकाय नमः

ॐ कपटवर्जिताय नमः
,, कालातीताय नमः
,, अवस्थात्रयसाक्षिणे नमः
,, अप्रमेयाय नमः
,, अद्वयाय नमः
,, अव्यक्ताय नमः
,, गूढाय नमः
,, ग्रन्थित्रयविमोक्षणाय नमः
,, चिन्मात्राय नमः
,, ज्ञानगम्याय नमः
,, ब्रह्मानन्दाय नमः
,, भवाब्धितारकाय नमः
,, परात्पराय नमः
,, तत्त्वमर्थाय नमः
,, दुष्टदूराय नमः
,, दुराचारनाशनाय नमः
,, आभास्वराय नमः
,, विधिविष्णुशिवाकृतये नमः
,, असल्लक्षणविलक्षणाय नमः
,, अजडाय नमः
,, अपारसंसारार्थविघट्टनाय नमः
,, अमन्यवे नमः
,, अमोघवैभवाय नमः
,, अभयङ्कराय नमः
, वरदाय नमः

ॐ मुक्तिरूपाय नमः
,, शाश्वताय नमः ८५
,, अखण्डमहिमाम्भोधये नमः
,, अखण्डबोधाय नमः
,, मनोवाचामगोचराय नमः
, परिपूर्णात्मने नमः
,, बाह्यान्तरस्थिताय नमः ९०
,, भक्तिश्रद्धाध्यानगम्याय नमः
,, निरहंकृतये नमः
,, निर्विकाराय नमः
,, निर्वैराय नमः
,, लक्ष्यालक्ष्यवर्जिताय नमः ९५

ॐ निर्विकल्पाय नमः
,, अव्ययाय नमः
,, अनन्तरूपाय नमः
,, अनुत्तमाय नमः
,, दक्षिणाभिमुखाय नमः १००
,, अद्भुताय नमः
,, अलिङ्गाय नमः
,, निःसङ्गाय नमः
,, निर्वाणसुखदाय नमः
,, निगमातीताय नमः १०५
,, नित्याय नमः
,, धर्मवतां वराय नमः
,, श्रीगुरुमूर्तये नमः १०८

नानाविधपरिमलमन्त्रपुष्पाणि समर्पयामि ।
इति श्रीगुर्वष्टोत्तरशतनामावलिः ॥

—●—

श्रीगुरुगीता

॥ अथ प्रथमोऽध्यायः ॥

पहला अध्याय

—●—

अचिन्त्याव्यक्तरुपाय निर्गुणाय गुणात्मने ।
समस्तजगदाधारमूर्तये ब्रह्मणे नमः ।१।

जो ब्रह्म अचिन्त्य और अव्यक्त है, वास्तव में त्रिगुण से रहित है, तो भी देखने वालों के अज्ञान की उपाधि से त्रिगुणात्मक है, सारे जगत् को मिथ्या प्रतीत होने का अधिष्ठान रूप कारण भी है उस ब्रह्म के लिये मेरा नमस्कार । १ ।

ऋषय ऊचु :—

सूत सूत महाप्राज्ञ निगमागमपारग ।
गुरुस्वरुपमस्माकं ब्रूहि सर्वमलापहम् । २ ।

ऋषियों ने कहा :—

प्यारे सूत जी, आप बड़े विद्वान हैं, वेद और वेदाङ्गों को पार किये हैं इसलिए सब पापों को हरण करने वाले गुरु के स्वरूप को हम से कहिये । २ ।

यस्य श्रवणमात्रेण देही दुःखाद्विमुच्यते ।
येन मार्गेण मुनयः सर्वज्ञत्वं प्रपेदिरे । ३ ।

जिसको सुनने से ही लोग दुःख से विमुक्त हो जाते हैं, जिस उपाय से मुनियों ने सर्वज्ञत्व प्राप्त किया है । ३ ।

यत्प्राप्य न पुनर्याति नरः संसारबन्धनम् ।
तथाविधं परं तत्त्वं वक्तव्यमधुना त्वया । ४ ।

जिसको प्राप्त करके मनुष्य संसार के बंधन से मुक्त हो जायेगा, वैसा परम तत्व आप के द्वारा अब कहा जाना चाहिए । ४ ।

गुह्याद्गुह्यतमं सारं गुरुगीता विशेषतः ।
त्वत्प्रसादाच्च श्रोतव्या तत्सर्वं ब्रूहि सूत नः । ५ ।

जो तत्व परम रहस्य और श्रेष्ठ है और विशेष करके गुरु गीता आप की कृपा से हमें सुननो चाहिए । प्यारे सूत जी उन सब को कहिए । ५ ।

इति संप्रार्थितः सूतो मुनिसंघैर्मुहुर्मुहुः ।
कुतूहलेन महता प्रोवाच मधुरं वचः । ६ ।

ऋषियों द्वारा बार-बार ऐसी प्रार्थना किए जाने पर सूत जी ने बहुत प्रसन्न होकर मीठो बात बताई । ६ ।

सूत उवाच :—

शृणुध्वं मुनयः सर्वे श्रद्धया परया मुदा ।
वदामि भवरोगघ्नीं गीतां मातृस्वरूपिणीम् ।७।

सूत जी ने कहा :—

संसार रुप रोग का शमन करने वाली और माता की भांति पालन करने वाली गुरु गीता को बताऊंगा । प्यारे मुनियो आप उसको खूब श्रद्धा और प्रसन्नता से सुनिए । ७ ।

पुरा कैलासशिखरे सिद्धगन्धर्वसेविते ।
तत्र कल्पलतापुष्पमन्दिरेऽत्यन्तसुन्दरे । ८ ।

सिद्ध गन्धर्व आदि देवताओं के आवास कैलाश पर्वत के शिखर पर कल्प वृक्ष के फूलों से बने हुए अत्यन्त सुन्दर मन्दिर में । ८ ।

व्याघ्राजिने समासीनं शुकादिमुनिवन्दितम् ।
बोधयन्तं परं तत्त्वं मध्येमुनिगणं क्वचित् । ९ ।

मुनियों के बीच, व्याघ्र की खाल पर बैठे हुए, श्री शुक आदि महामुनियों द्वारा वन्दना किए जाने वाले । ९ ।

प्रणम्रवदना शश्वन्नमस्कुर्वन्तमादरात् ।
दृष्ट्वा विस्मयमापन्ना पार्वती परिपृच्छति । १० ।

ज्ञानमय परम तत्व रुद्र भगवान शंकर जी को बार-बार नमस्कार करते देखकर पार्वती ने आश्चर्य में भरकर प्रणाम करके पूछा । १० ।

पार्वत्यु वाच :—

ओं नमो देव देवेश परात्पर जगद्गुरो ।
त्वां नमस्कुर्वते भक्त्या सुरासुरनराः सदा । ११ ।

श्री पार्वती ने कहा—

देवों के देव श्रेष्ठों से श्रेष्ठ और जगत के गुरु जो हैं और ओंकार का अर्थ भी जो है ऐसे आपको नमस्कार। सुर, असुर और मनुष्य ये सब हमेशा भक्तिपूर्वक आपको नमस्कार करते हैं।११।

विधिविष्णुमहेन्द्राद्यैर्वन्द्यः खलु सदा भवान् ।
नमस्करोषि कस्मै त्वं नमस्काराश्रयः किल । १२ ।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी आपको नमस्कार करते हैं सब के नमस्कार के योग्य आप किसको नमस्कार करते हैं।१२।

दृष्ट्वैतत्कर्म विपुलमाश्चर्यं प्रतिभाति मे ।
किमेतन्न विजानेहं कृपया वद मे प्रभो । १३ ।

ऐसे आचरण को देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। क्या इस बात को मैं नहीं समझ सकती ? कृपा करके आप मुझ से कहिए। १३।

भगवन् सर्वधर्मज्ञ व्रतानां व्रतनायकम् ।
ब्रूहि मे कृपया शम्भो गुरुमाहात्म्यमुत्तमम् । १४ ।

सब धर्मों को जानने वाले भगवान्। सब व्रतों की अपेक्षा जिस का व्रत करना बहुत बड़ा है ऐसे गुरु-महात्म्य को कृपा करके मुझसे कहिए।१४।

केन मार्गेण भो स्वामिन् देही ब्रह्ममयो भवेत् ।
तत्कृपां कुरु मे स्वामिन्नमामि चरणौ तव । १५ ।

हे स्वामी जी ! किस मार्ग से जीव ब्रह्मरूप हो जाता है यह कहने की कृपा कीजिए। आपके चरणों में नमस्कार करती हूँ।१५।

इति संप्रार्थितः शश्वन्महादेवो महेश्वरः ।
आनन्दभरितः स्वान्ते पार्वतीमिदमब्रवीत् । १६ ।

श्री पारवती देवी के द्वारा बार-बार ऐसी प्रार्थना करने पर महादेव महेश्वर ने मन में संतुष्ट होकर ऐसा कहा।१६।

महादेव उवाच—

न वक्तव्यमिदं देवि रहस्यातिरहस्यकम् ।
न कस्यापि पुरा प्रोक्तं त्वद्भक्त्यर्थं वदामि तत् । १७ ।

श्री महादेव जी ने कहा—

वह बात रहस्यों में रहस्य है, इसीलिए उसे कहना उचित नहीं, किसी से पहले कहा भी नहीं, तो भी तुम्हारी भक्ति को देख कर उस बात को कहूँगा।१७।

मम रूपासि देवि त्वमतस्तत्कथयामि ते ।
लोकोपकारकः प्रश्नो न केनापि कृतः पुरा ।१८।

हे देवी ! तुम मेरा ही एक स्वरूप हो इसलिये तुम से कहूंगा, तुम्हारा यह प्रश्न लोक का उपकार करने वाला है, ऐसा प्रश्न इसके पहले किसी ने नहीं किया। १८।

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ।१९।

जिसको ईश्वर में उत्तम भक्ति होती है, जैसी ईश्वर में वैसी ही गुरु में भी, जिसको भक्ति होती है, ऐसे महात्मा ही यहाँ कही हुई बात समझेंगे । १६ ।

यो गुरुः स शिवः प्रोक्तो यः शिवः स गुरुः स्मृतः ।
विकल्पं यस्तु कुर्वीत स नरो गुरुतल्पगः ।२०।

जो गुरु है वही शिव है, जो शिव है वही गुरु है. जो दोनों में अन्तर मानता है वह गुरु-पत्नी को ग्रहण करने वाले के समान पापी है । २० ।

दुर्लभं त्रिषु लोकेषु तच्छृणुष्व वदाम्यहम् ।
गुरुर्ब्रह्म विना नान्यः सत्यं सत्यं वरानने ।२१।

प्यारी पार्वती ! तीनों लोकों में भी जो बात सुनना मुश्किल है वह सुनो, मैं कहता हूं ब्रह्म को छोड़ कर कोई दूसरा गुरु नहीं, यह सत्य है ह सत्य है । २१ ।

वेदशास्त्रपुराणानि चेतिहासादिकानि च ।
मन्त्रयन्त्रविद्यादीनिमोहनोच्चाटनादिकम् ।२२।

शैवशाक्तागमादीनि ह्यन्ये च बहवो मताः ।
अपभ्रंशाः समस्तानां जीवानां भ्रान्तचेतसाम् ।२३।

जपस्तपो व्रतं तीर्थं यज्ञो दानं तथैव च ।
गुरुतत्त्वमविज्ञाय सर्वं व्यर्थं भवेत्प्रिये ।२४।

जब तक गुरु के तत्व को नहीं समझता तब तक वेद, शास्त्र, पुराण, इतिहास, मन्त्र, यन्त्र-विद्या, मोहन, उच्चारण, शैव, अगम, शाक्त, आगम और अत्यन्त मन आदि सब जीवों को परेशान और पागल करने वाले और हानिकारक हैं, और जप, तप, व्रत तीर्थ स्थान यज्ञ और दान आदि सब व्यर्थ होगा । २२, २३, २४ ।

गुरुबुद्ध्यात्मनो नान्यत् सत्यं सत्यं वरानने ।
तल्लाभार्थं प्रयत्नस्तु कर्तव्यश्च मनीषिभिः ।२५ ।

जिसकी आत्मा में गुरु के तत्व का ज्ञान है उसकी समझ में गुरु के अतिरिक्त और कोई वस्तु सत्य नहीं है यह बात सत्य मान लो उस ज्ञान की सिद्धि के लिए बुद्धिमान लोगों को प्रयत्न करना चाहिए ।२५।

गूढाविद्या जगन्माया देहश्चाज्ञानसम्भवः ।
विज्ञानं यत्प्रसादेन गुरुशब्देन कथ्यते ।२६।

जगत का कल्याण जो माया है, वह जीव में छिपी हुई अविद्या ही है, और शरीर अज्ञान से ही बना हुआ है ऐसा ज्ञान जिसकी कृपा से सिद्ध हो जाएगा उसका नाम गुरु है । २६ ।

यदंघ्रिकमलद्वन्द्वं द्वन्द्वतापनिवारकम् ।
तारकं भवसिन्धोश्च तं गुरुं प्रणमाम्यहम् । २७ ।

जिनके चरण-कमल का जोड़ा द्वैत से उत्पन्न सन्ताप का नाश करता है और संसार समुद्र को पार करता है, उस गुरु को मैं नमस्कार करता हूं । २७ ।

देही ब्रह्म भवेद्यस्मात् त्वत्कृपार्थं वदामि तत् ।
सर्वपापविशुद्धात्मा श्रीगुरोः पादसेवनात् ।२८।

जिससे जीव ब्रह्म होगा वह मैं तुम पर कृपा रखकर बताऊंगा, श्री गुरु जी के पद सेवन करने से सर्व पापों से विमुक्त होकर जीव ब्रह्म हो जायगा । २८ ।

सर्वतीर्थावगाहस्य संप्राप्नोति फलं नरः ।
गुरोः पादोदकं पीत्वा शेषं शिरसि धारयन् ।२९।

गुरु जी के पाद धोने का पानी पीने से और बाकी सिर पर रखने से मनुष्य को सब तीर्थों में स्नान करने का फल मिलता है ।२९।

शोषणं पापपङ्कस्य दीपनं ज्ञानतेजसः ।
गुरोः पादोदकं सम्यक् संसारार्णवतारकम् ।३०।

गुरु के पाद धोने का जल पाप के कीचड़ को सुखाने वाला है, ज्ञान के प्रकाश को बढ़ाने वाला है, और संसार सागर को ठीक से पार कराने वाला भी है । ३० ।

अज्ञानमूलहरणं जन्मकर्मनिवारकम् ।
ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं गुरुपादोदकं पिबेत् । ३१ ।

अज्ञान की जड़ को उखाड़ने वाला, जन्म और कर्म को रोकने वाला और ज्ञान एवं वैराग्य को पैदा करने वाला गुरु के पैर का पानी पीना चाहिए । ३१ ।

गुरुपादोदकं पानं गुरोरुच्छिष्टभोजनम् ।
गुरुमूर्तेः सदा ध्यानं गुरोर्नाम्नः सदा जपः ।३२।

गुरु के पैर का पानी पीना, गुरु के भोजन में से बाकी बचा हुआ खाना खाना और गुरु की मूर्ति का ध्यान करना और गुरु के नाम का जप करना चाहिये । ३२ ।

स्वदेशिकस्यैव च नामकीर्तनं भवेदनन्तस्य शिवस्य कीर्तनम् ।
स्वदेशिकस्यैव च नामचिन्तनं भवेदनन्तस्य शिवस्य चिन्तनम् ।३३।

अपने गुरु के नाम का कीर्तन भगवान शिव जी का कीर्तन ही है । अपने गुरु के नाम का ध्यान भगवान शिव जी का ध्यान ही है । ३३ ।

यत्पादरेणुर्वै नित्यं कोऽपि संसारवारिधौ ।
सेतुबन्धायते नाथं देशिकं तमुपास्महे ।३४।

जिसके पद-रज (पैर की धूल) से संसार समुद्र का पुल हो जाता है ऐसे गुरु नाम की उपासना मैं कर रहा हूँ । ३४ ।

यदनुग्रहमात्रेण शोकमोहौ विनश्यतः ।
तस्मै श्रीदेशिकेन्द्राय नमोऽस्तु परमात्मने ।३५।

जिसके केवल अनुग्रह से शोक और मोह नष्ट हो जाता है, ऐसे परमात्मा स्वरूप गुरु को मेरा नमस्कार ।३५।

यस्मादनुग्रहं लब्ध्वा महदज्ञानमुत्सृजेत् ।
तस्मै श्री देशिकेन्द्राय नमश्चाभीष्टसिद्धये ।३६।

जिससे अनुग्रह पाकर समूल अज्ञान को छोड़ सकता है उस गुरु महाराज की अभीष्ट सिद्धि के लिए मेरा प्रणाम ।३६।

काशीक्षेत्रं निवासश्च जाह्नवी चरणोदकम् ।
गुरुर्विश्वेश्वरः साक्षात् तारकं ब्रह्मनिश्चयः ।३७।

गुरु का निवास स्थान काशी क्षेत्र है, गुरु का पादोदक गंगा जी है, गुरु जी भगवान विश्वनाथ और तारक ब्रह्म हैं, यह सिद्धान्त है ।३७।

गुरुसेवा गया प्रोक्ता देहः स्यादक्षयो वटः ।
तत्पादं विष्णुपादं स्यात् तत्र दत्तमनस्ततम् ।३८।

गुरु की सेवा ही तीर्थराज गया है । गुरु का शरीर अक्षयवट है । गुरु का पाद विष्णुपाद है । उसमें रखा हुआ मन विस्तृत हो जायगा ।३८।

गुरुमूर्तिं स्मरेन्नित्यं गुरोर्नाम सदा जपेत् ।
गुरोराज्ञां प्रकुर्वीत गुरोरन्यं न भावयेत् ।३९।

गुरु की मूर्ति का स्मरण और गुरु के नाम का जप हमेशा करना चाहिए । गुरु की आज्ञा का पालन करना, गुरु को छोड़कर अन्य की भावना नहीं करनी चाहिए ।३९।

गुरुवक्त्रे स्थितं ब्रह्म प्राप्यते तत्प्रसादतः ।
गुरोर्ध्यानं सदा कुर्यात् पुरुषं स्वैरिणी यथा ।४०।

ब्रह्म गुरु के मुख (वचन) में स्थित है गुरु की प्रसन्नता में वह (ब्रह्म) मिल जाता है । गुरु का ध्यान हमें करना चाहिए, जैसा कि पतिव्रता स्त्री अपने पति का ध्यान करती है ।४०।

स्वाश्रमं च स्वजातिं च स्वकीर्तिं पुष्टिवर्धनम् ।
एतत्सर्वं परित्यज्य गुरुमेव समाश्रयेत्।४१।

अपने आश्रम, यश, जाति, कीर्ति और भरण पालन-पोषण—इन सब को छोड़कर भी गुरु की सेवा करनी चाहिए ।४१।

अनन्याश्चिन्तयन्तो ये सुलभं परमं सुखम् ।
तत्मात्सर्वप्रयत्नेन गुरोराराधनं कुरु ।४२।

अन्य को छोड़कर गुरु का चिन्तन करने वाले को परम सुख मिलता है इसलिए सारे प्रयत्न से गुरु की अराधना करनी चाहिए ।४२।

गुरुवक्त्रे स्थिता विद्या गुरुभक्त्या च लभ्यते ।
त्रैलोक्ये स्फुटवक्तारो देवर्षिपितृमानवाः ।४३।

विद्या गुरु के मुख में रहती है, और गुरु की भक्ति में मिल सकती है । यह बात देव, ऋषि, पितृ, और मानव आदि लोगों के द्वारा स्पष्ट रूप से कही गई है ।४३।

गुकारश्चान्धकारो हि रुकारस्तेज उच्यते ।
अज्ञानग्रासकं ब्रह्म गुरुरेव न संशयः ।४४।

गु शब्द का अर्थ अज्ञान है । रु शब्द का अर्थ प्रकाश है । अज्ञान को नष्ट करने वाला जो ब्रह्म रूप प्रकाश है वही गुरु है ।४४।

गुकारश्चान्धकारस्तु रुकारस्तन्निरोधकृत् ।
अन्धकारविनाशित्वात् गुरुरित्यभिधीयते ।४५।

गु कार अन्धकार है, रु कार उसका निवर्तक है। अन्धकार को नष्ट करने के कारण ही गुरु कहा जाता है ।४५।

गुकारश्च गुणातीतो रुपातीतो रुकारकः ।
गुणरूपविहीनत्वात् गुरुरित्यभिधीयते ।४६।

गु कार से गुणातीत कहा जाता है रू कार से रूपातीत कहा जाता है, गुण और रुप से रहित होनेके कारण गुरु कहा जाता है ।४६।

गुकारः प्रथमो वर्णो मायादिगुणभासकः ।
रुकारोऽस्ति परं ब्रह्म मायाभ्रान्तिविमोचकम् ।४७।

माया आदि गुणों को प्रकाशित करने वाला गुकार पहला अक्षर है उस समय आदि गुणों की भ्रान्ति को छोड़ देने वाला परम ब्रह्म ही रुकार है ।४७।

एवं गुरुपदं श्रेष्ठं देवानामपि दुर्लभम् ।
हाहाहूहूगणैश्चैव गन्धर्वाद्यैश्च पूजितम् ।४८।

ऐसे गुरु का पद श्रेष्ठ है और वह देवताओं को भी मिलना मुश्किल है। गन्धर्व लोग भी उसकी पूजा करते हैं ।४८।

ध्रुवं तेषां च सर्वेषां नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ।
गुरोराराधनं कुर्यात् स्वजीवत्वं निवेदयेत् ।४९।

न सबों के लिए गुरु के बराबर कोई तत्त्व नहीं है। इस ण गुरु की अराधना करें और अज्ञान के कारण अपने जीवत्व ा जो उपाधि है, उसे गुरु को समर्पित करें ।४९।

आसनं शयनं वस्त्रं वाहनं भूषणादिकम् ।
साधकेन प्रदातव्यं गुरुसन्तोषकारणम् ।५०।

गुरु को सन्तुष्ट करने वाले आसन बिस्तर, वस्त्र, आभूषण आदि सब कुछ गुरु को अर्पण करना साधक का कर्तव्य है ।५०।

कर्मणा मनसा वाचा सर्वदाऽऽराधयेद्गुरुम् ।
दीर्घदण्डं नमस्कृत्य निर्लज्जो गुरुसन्निधौ ।५१।

गुरु के सामने लज्जा छोड़कर दीर्घ दण्ड नमस्कार करना और शरीर, मन और वाणी से उसकी अराधना हमेशा करनी चाहिये ।५१।

शरीरमिन्द्रिय प्राणमर्थस्वजनबान्धवान् ।
आत्मदारादिकं सर्वं सद्गुरुभ्यो निवेदयेत् ।५२।

अपने शरीर, इन्द्रिय, प्राण, धन, नौकर, रिश्तेदार, पत्नी आदि सबको गुरु को अर्पण करना चाहिये ।५२।

गुरुरेको जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात्संपूजयेद्गुरुम् ।५३।

ब्रह्मा, विष्णु और शिव के साथ सब जगत गुरु में शामिल हैं, गुरु को छोड़कर दूसरा कुछ भी नहीं है, इसलिए गुरु की पूजा करनी चाहिए ।५३।

सर्वश्रुतिशिरोरत्नविराजितपदांबुजम् ।
वेदान्तार्थप्रवक्तारं तस्मात्संपूजयेद्गुरुम् ।५४।

सभी उपनिषदों में जिसका चरण कमल ही प्रकाशमान है और सब उपनिषदों को जो प्रकाशित करता है, उस गुरु की पूजा करें ।५४।

यस्य स्मरणमात्रेण ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम् ।
स एव सर्वसंपत्तिः तस्मात्संपूजयेद्गुरुम् ।५५।

जिस के स्मरण से ही ज्ञान अपने आप पैदा होता है, वही सब सम्पदा के आश्रय गुरु हैं, इससे गुरु की सेवा करना चाहिये ।५५।

कृमिकोटिभिराभिष्टं दुर्गन्धमलमूत्रकम् ।
श्लेष्मरक्तत्वचामांसैर्नद्धं देहं वरानने ।५६।

प्यारी पार्वती ! यह शरीर करोड़ों कीड़ों और दुर्गन्ध मल-मूत्र से भरा हुआ है और कफ, और चर्म से बांधा हुआ है ।५६।

संसारवृक्षमारुढाः पतन्ति नरकार्णवे ।
यस्तानुद्धरते सर्वान् तस्मै श्री गुरवे नमः ।५७।

लोग संसार रुपी वृक्ष पर चढ़ कर नरक रूपी समुद्र में गिरते हैं। उन सब की जो रक्षा करता है उस गुरु जी को मेरा नमस्कार ।५७।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुगुर्रुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ।५८।

गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु है, गुरु ही महेश्वर है वही परंब्रह्म है, ऐसे गुरु को मेरा नमस्कार ।५८।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ।५९।

अज्ञान रूपी तिमिर से जो अन्धा हो गया है उसकी आंखों को जिसने ज्ञान रूपि अंजन के प्रयोग से खोला है उस गुरु को मेरा प्रणाम ।५९।

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ।६०।

जो वस्तु अविभक्त और चारों तरफ फैली हुई है और सकल चराचर में व्याप्त है, उस वस्तु ('वह' पद का अर्थ) को जिसने दिखाया है उस गुरु को मेरा प्रणाम ।६०।

स्थावरं जङ्गमं व्याप्तं यत्किञ्चित्सचराचरम् ।
त्वं पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ।६१।

रहने वाले और चलने वाले सब चराचरों में जो 'तुम' पद का अर्थ व्याप्त है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।६१।

चिन्मयं व्यापितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।
असित्वं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ।६२।

चेतनता से व्याप्त और चराचर सहित सारे लोकों का एकत्व 'है' पद से जिसने दिखाया है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।६२।

निमिषान्निमिषार्धाद्वा यद्वाक्याद्वै विमुच्यते ।
स्वात्मानं शिवमालोक्य तस्मै श्री गुरवे नमः ।६३।

जिसका वचन सुनकर एक या आधा निमिष में ही अपनी आत्मा रूप शिव जी को देख कर शिष्य मुक्त हो जाता है, उस गुरु को मेरा नमस्कार ।६३।

चैतन्यं शाश्वतं शान्तं व्योमातीतं निरञ्जनम् ।
नादबिन्दुकलातीतं तस्मै श्री गुरवे नमः ।६४।

शाश्वत, शान्त, पाप रहित आकाश से भी सूक्ष्म नाद बिन्दु और कला से अप्राप्य जो चैतन्य ही गुरु है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।६४।

निर्गुणं निर्मलं शान्तं जङ्गमं स्थिरमेव च ।
व्याप्तं येन जगत्सर्वं तस्मै श्री गुरवे नमः ।६५।

चल और स्थिर सारे जगत जिससे व्याप्त हैं और जो निर्गुण, निर्मल और शान्त है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।६५।

स पिता स च मे माता स बन्धुः स च देवता ।
संसारमोहनाशाय तस्मै श्री गुरवे नमः ।६६।

वही मेरा पिता है, वही माता है, वही बन्धु है, वही देवता है, संसार के मोह को नष्ट करने वाले उस गुरु को मेरा नमस्कार ।६६।

यत्सत्त्वेन जगत्सत्यं यत्प्रकाशेन भासते ।
यदानन्देन नन्दन्ति तस्मै श्री गुरवे नमः ।६७।

जिस के होने से जगत सत्य है, जिस के प्रकाश से जगत प्रकाशित होता है। जिसके आनन्द से जगत को आनन्द प्राप्त है उस श्रीगुरु को मेरा नमस्कार ।६७।

यस्मिन् स्थितमिदं सर्वं भाति यद्भानरुपतः ।
प्रियं पुत्रादि यत्प्रीत्या तस्मै श्री गुरवे नमः ।६८।

यह सब जिस पर रहता है, जिस का भान ही इस सब का भान है, जिसके प्यारा होने से पुत्र आदि प्यारा होता है, उस श्री गुरु को नमस्कार करता हूं ।६८।

येनेदं दर्शितं तत्त्वं चित्तचैत्यादिकं तथा ।
जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादि तस्मै श्री गुरवे नमः ।६९।

मन और मन के विषय, जाग्रत स्वप्न और सुषुप्त आदि का तत्व जिसने दिखाया है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।६९।

यस्य ज्ञानमिदं विश्वं न दृश्यं भिन्नभेदतः ।
सदैकरूपरूपाय तस्मै श्री गुरवे नमः ।७०।

जिसका ज्ञान ही इस संसार का अधिष्ठानरूप है, फिर भी जो भेद से देखा नहीं जाता है, हमेशा एक ही रूप धारण करने वाले उस गुरु को मेरा नमस्कार ।७०।

यस्य ज्ञातं मतं तस्य मतं यस्य न वेद सः ।
अनन्यभावभावाय तस्मै श्री गुरवे नमः ।७१।

जो गुरु को समझता है वही सब कुछ समझता है। जो गुरु को छोड़कर अन्य को समझता है वह कुछ भी नहीं समझता है। अन्य का स्वरूप न होना ही जिसका स्वरूप है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।७१।

यस्मै कारणरूपाय कार्यरूपेण भाति यत् ।
कार्यकारणरूपाय तस्मै श्री गुरवे नमः ।७२।

कारण रूप होकर भी जो कार्य रूप में प्रकाशित होता है, कारण और कार्य के रूप में स्थित उस गुरु को मेरा नमस्कार ।७२।

नानारूपमिदं विश्वं न केनाप्यस्ति भिन्नता ।
कार्यकारणरूपाय तस्मै श्री गुरवे नमः ।७३।

यह संसार अनेक रुप वाला है, तो भी एक दूसरे से भिन्न नहीं है। क्योंकि एक गुरु ही कारण और कार्य रूप में रहते हैं। उस गुरु को मेरा नमस्कार ।७३।

ज्ञानशक्तिसमारूढ़तत्त्वमालाविभूषिणे ।
भुक्तिमुक्तिप्रदात्रे च तस्मै श्री गुरवे नमः ।७४।

ज्ञान शक्ति पर आरोहण करके तत्वों की माला पहनने वाले, भुक्ति और मुक्ति को देने वाले श्री गुरु को मेरा नमस्कार ।७४।

अनेकजन्मसंप्राप्तकर्मबन्धविदाहिने ।
ज्ञानानलप्रभावेन तस्मै श्री गुरवे नमः ।७५।

अनेक जन्मों में पैदा हुए कर्मों की बन्ध को ज्ञान रूपी आग में जलाने वाले गुरु को मेरा नमस्कार ।७५।

शोषणं भवसिन्धोश्च दीपनं क्षरसंपदाम् ।
गुरोः पादोदकं यस्य तस्मै श्री गुरवे नमः ।७६।

जिस के पैर का पानी संसार समुद्र को सुखा सकता है और बन्धन वाले सम्पदा को जलाता है उस गुरु को मेरा न .स्कार ।७६।

न गुरोरधिकं तत्त्वं न गुरोरधिकं तपः ।
न गुरोरधिकं ज्ञानं तस्मै श्री गुरवे नमः ।७७।

गुरु से ज्यादा कोई तत्व नहीं है, गुरु से ज्यादा कोई रूप नहीं है, गुरु से ज्यादा कोई ज्ञान नहीं है, ऐसे गुरु को मेरा नमस्कार ।७७।

मन्नाथः श्री जगन्नाथो मद्गुरुः श्रीजगद्गुरुः ।
ममात्मा सर्वभूतात्मा तस्मै श्री गुरवे नमः ।७८।

गुरु सबका आदि है और उसका आदि कुछ भी नहीं है। जो मेरा संरक्षक है, तथा जगत का भी संरक्षक है, जो मेरा गुरु है तथा जगत का भी गुरु है, जो मेरी आत्मा है तथा जगत की भी आत्मा है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।७८।

गुरुरादिरनादिश्च गुरुः परमदैवतम् ।
गुरुमन्त्रसमो नास्ति तस्मै श्री गुरवे नमः ।७९।

गुरु सबका आदि है उसका आदि कुछ भी नहीं है। गुरु नाम के समान कोई मंत्र नहीं है, उस गुरु को मेरा नमस्कार ।७९।

एक एव परो बिन्धुर्विषमे समुपस्थिते ।
गुरुः सकलधर्मात्मा तस्मै श्री गुरवे नमः ।८०।

जब कठिनाई आ जाती है तब गुरु को छोड़ मदद करने वाला कोई नहीं है। धर्म ही जिसका स्वरूप है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।८०।

गुरुमध्ये स्थितं विश्वं विश्वमध्ये स्थितो गुरुः ।
गुरुर्विश्वं न चान्योऽस्ति तस्मै श्री गुरवे नमः ।८१।

गुरु के हृदय में ही जगत है और जगत के हृदय में ही गुरु है, गुरु ही जगत है और कोई नहीं है, उस गुरु को मेरा नमस्कार ।८१।

भवारण्यप्रविष्टस्य दिङ्मोहभ्रान्तचेतसः ।
येन सन्दर्शितः पन्थाः तस्मै श्री गुरवे नमः ।८२।

जो संसार के जंगल में पड़ा है और दिशाओं को भूल गया है उसको जिसने मार्ग दिखाया है उस गुरु को मेरा नमस्कार ।८२।

तापत्रयाग्नितप्तानामशान्तप्राणिनां भुवि ।
गुरुरेव परा गङ्गा तस्मै श्री गुरवे नमः ।८३।

तीन प्रकार के ताप के आग में जलने वाले और अशान्त प्राणियों के लिए गुरु ही उत्तम गंगा जी है, उस गुरु को मेरा नमस्कार ।८३।

अज्ञानेनाहिना ग्रस्ताः प्राणिनस्तान् चिकित्सकः ।
विद्यास्वरूपो भगवान् तस्मै श्री गुरवे नमः ।८४।

सभी प्राणी अज्ञान रूपी साँप के काटे हुए हैं। उनकी दवाई करने वाले विद्या स्वरूप गुरु भगवान ही हैं, उस गुरु को मेरा नमस्कार ।८४।

हेतवे जगतामेव संसारार्णवसेतवे ।
प्रभवे सर्वविद्यानां शंभवे गुरवे नमः ।८५।

जो जगत का हित और संसार समुद्र का पुल और सब विद्याओं को पैदा करने वाले हैं शिव स्वरुप उस गुरु को मेरा नमस्कार ।८५।

ध्यानमूलं गुर्रोमूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मुक्तिमूलं गुरोः कृपा ।८६ ।

ध्यान के लिए गुरु की मूर्ति है, पूजा के लिए गुरु के चरण हैं, मन्त्र के लिए गुरु का नाम है, एवं मुक्ति के लिए गुरु की कृपा है ।८६।

सप्तसागरपर्यन्तं तीर्थस्नानफलं तु यत् ।

गुरुपादपयोबिन्दोः सहस्रांशेन तत्फलम् ।८७।

सातों तीर्थों के समुद्रों में स्नान करने का जो फल होगा वह गुरु के पाद जल के एक बूंद के फल का हजार में एक अंश ही होगा ।८७।

शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ।

लब्ध्वा कुलगुरुं सम्यग्गुरुमेव समाश्रयेत् ।८८।

शिव जी नाराज हों तो गुरु जी बचाने वाले हैं, गुरु जी नाराज हो तो बचाने वाला कोई नहीं है; इससे, कुल गुरु को प्राप्त कर उसका ही आश्रय करना चाहिए । ८८ ।

मधुलुब्धो यथा भृंगः पुष्पात् पुष्पांतरं व्रजेत् ।

ज्ञानलुब्धस्तथा शिष्यो गुरोर्गुर्वन्तरं व्रजेत् ।८९।

शहद प्राप्त करने के वास्ते जैसे भौंरा एक फूल से दूसरे फूल पर जाता है वैसे ही ज्ञान के लिये शिष्य को चाहिए कि एक गुरु से दूसरे गुरु को ग्रहण करना । ८९ ।

वन्दे गुरुपदद्वन्द्वं वाङ्.मनोतीतगोचरम् ।

श्वेतरक्तप्रभाभिन्नं शिवशक्त्यात्मकं परम् ।९०।

मन और वाणी का अविषय, सफेद या लाल रंग का नहीं देने वाले और शिव और शक्ति के रूप में रहने वाले गुरु के दो चरणों की वंदना करता हूँ । ९० ।

गुकारं च गुणातीतं रुकारं रूपवर्जितम् ।

गुणातीतमरूपं च यो दद्यात् स गुरुः स्मृतः ।९१।

गुकार से गुणातीत कहा जाता है; गुणातीत और रूपरहित वस्तु जिससे प्राप्त होती है वह स्मृतियों में गुरु कहा जाता है । ९१ ।

अग्निनेत्रः शिवः साक्षात् द्विबाहुश्च हरिः स्मृतः ।

योऽचतुर्वदनो ब्रह्मा श्री गुरुः कथितः प्रिये ।९२।

प्यारी पार्वती ! दो आँख वाले शिवजी, दो हाथ वाले विष्णु भगवान और एक मुख वाले ब्रह्मा जी ही गुरु हैं । ९२ ।

अयं मयाञ्जलिर्बद्धो दयासागरसिद्धये ।

यदनुग्रहतो जन्तुश्चिन्नसंसारमुक्तिभाक् ।९३।

जिसके अनुग्रह से जीव संसार से छूट जाता है; उस की कृपा पाने के लिये मेरा यह हाथ जुड़ा हुआ है ।९३।

श्री गुरोः परमं रुपं विवेकचक्षुरग्रतः ।

मन्दभाग्या न पश्यन्ति अन्धाः सूर्योदयं यथा ।९४।

विवेक की आंख वाले गुरु के परम स्वरूप को सामने देखते हैं, वह बद किस्मत नहीं देखेंगे, जैसे कि अंधा सूर्योदय को नहीं देखता ।९४।

कुलानां कुलकोटीनां तारकस्तत्र तत्क्षणात् ।

अतस्तं सद्गुरुं ज्ञात्वा त्रिकालमभिवादयेत् ।९५।

अपने कुलों का और उनके कुलों का भी गुरु एक ही समय में और स्थान में संसार को पार करने वाले हैं इसलिये सद्गुरु को समक्ष कर प्रतिदिन अभिवादन करना चाहिए। ९५।

श्रीनाथचरणद्वन्द्वं यस्यां दिशि विराजते।
तस्यां दिशि नमस्कुर्याद्भक्त्या प्रतिदिनं प्रिये।९६।

प्यारी पार्वती! गुरु महाराज का चरण जिस दिशा में है उस दिशा की तरफ प्रतिदिन भक्ति से नमस्कार करना चाहिए। ९६।

साष्टाङ्गप्रणिपातेन स्तुवन्नित्यं गुरुं भजेत्।
भजनात्स्थैर्यमाप्नोति स्वस्वरूपमयो भवेत्।९७।

साष्टांग नमस्कार करके स्त्रोत करते हुये गुरु का भजन करें; भजन से स्थिरता हो जाती है और गुरु के स्वभाव वाला ही स्वभाव हो जायेगा। ९७।

दोर्भ्यां पद्भ्यां च जानुभ्यामुरसा शिरसा दृशा।
मनसा वचसा चेति प्रणामोष्टाङ्ग उच्यते।९८।

नमस्कार का अष्टांग यह है कि हाथ, पैर, घुटना, वक्ष, सिर, आँख, मन और वचन इन आठ अवयवों से करे। ९८।

तस्यै दिशे सततमञ्जलिरेष नित्यं,
प्रक्षिप्यतां मुखरितैर्मधुरैः प्रसूनैः।
जागर्ति यत्र भगवान् गुरुचक्रवर्ती,
विश्वस्थितिप्रलयनाटकनित्यसाक्षी।९९।

जगत की उत्पत्ति और स्थिति के नाटक का साक्षी भगवान गुरु महाराज जिस दिशा में विराजमान है उस दिशा की तरफ से हाथ जोड़ रखना। ९९।

अभ्यस्तैः किमु दीर्घकालविमलैर्व्याधिप्रदैर्दुष्करैः।
प्राणायामशतैरनेककरणैर्दुःखात्मकैर्दुर्जयैः॥
यस्मिन्नभ्युदिते विनश्यति बली वायुः स्वयं तत्क्षणात्।
प्राप्तुं तत्सहजस्वभावमनिशं सेवेत चैकं गुरुम्।१००।

जो करने में मुश्किल हैं, रोगों को पैदा करते हैं; बहुत कष्ट करना पड़ता है, काबू में रखना मुश्किल है, दुःख देते हैं, ऐसे हजारों तरह के प्राणायाम और क्रियाओं का अभ्यास करने की क्या आवश्यकता? जिस वस्तु को पाने से हमें संसार में बाँध रखने वाली वायु अपने आप शांत हो जायेगी उस वस्तु को प्राप्त करने के लिये वैसे स्वभाव वाले गुरु की ही सेवा करो। १००।

ज्ञानं विना मुक्तिपदं लभ्यते गुरुभक्तितः।
गुरोः समानतो नान्यत् साधनं गुरुमार्गिणाम्।१०१।

गुरु पर भक्ति से ज्ञान के बिना भी मुक्ति मिलेगी। गुरु मार्गगामियों को गुरु के बराबर और कोई साधन नहीं है। १०१।

यस्मात्परतरं नास्ति नेति नेतीति वै श्रुतिः।
मनसा वचसा चैव सत्यमाराधयेद्गुरुम्।१०२।

गुरु से ज्यादा कुछ भी नहीं है। इससे वेद में "नहीं है, नहीं है" ऐसा कहा है मन और वाणी से सत्य स्वरूप गुरु की आराधना करनी चाहिये। १०२।

गुरोः कृपाप्रसादेन ब्रह्मविष्णुशिवादयः।
सामर्थ्यमभजन् सर्वे सृष्टिस्थित्यन्तकर्मणि ।१०३।

गुरु की कृपा और सन्तोष से ही ब्रह्मा विष्णु और शिव जी यथाक्रम लोक की सृष्टि, स्थिति और विश्राम करने की सामर्थ्य प्राप्त किये हुए है। १०३।

देवकिन्नरगन्धर्वाः पितृयक्षास्तु तुम्बुरुः।
मुनयोऽपि न जानन्ति गुरुशुश्रूषणे विधिम् ।१०४।

देव, किन्नर, गंधर्व, यक्ष, तुम्बुरु और मुनि लोग भी गुरु शुश्रुषा को प्रक्रिया नहीं समझते ।१०४।

तार्किकाश्छान्दसाश्चैव दैवज्ञाः कर्मठाःप्रिये।
लौकिकास्ते न जानन्ति गुरुतत्त्वं निराकुलम् ।१०५।

तार्किक, वैदिक, ज्योतिष, कर्मी, लौकिक में भी गुरु तत्व को ठीक से नहीं समझते ।१०५।

महाहङ्कारगर्वेण तपोविद्याबलेन च।
भ्रमन्त्येतस्मिन् संसारे घटीयन्त्रं यथा पुनः ।१०६।

गढ़े हुए अन्धकार की दिखावट से और जप विद्या के बल से जो लोग घटी यन्त्र की तरह चक्कर खाते हैं ।१०६।

यज्ञिनोऽपि न मुक्ताःस्युः न मुक्ता योगिनस्तथा।
तापसा अपि नो मुक्ता गुरुतत्त्वात्पराङ्मुखाः ।१०७।

अगर गुरु तत्व में श्रद्धा न हो तो यज्ञ से या योग से या तप से मुक्ति न होगी ।१०७।

न मुक्तास्तु गन्धर्वाः पितृयक्षास्तु चारणाः।
ऋषयः सिद्धदेवाद्याः गुरुसेवापराङ्मुखाः ।१०८।

गुरु की सेवा में श्रद्धा नहीं करने के कारण गन्धर्व, पितर, यक्ष, चारण, ऋषि, सिद्धदेव को भी मुक्ति नहीं मिली ।१०८।

॥ इति श्रीस्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वरसंवादे
श्री गुरुगीतायां प्रथमोऽध्यायः ॥
इसी प्रकार श्री स्कान्दोत्तरखण्ड में पार्वती-शिवसंवाद में
श्री गुरुगीता का प्रथम अध्याय की समाप्ति।

—●—

दूसरा अध्याय

ध्यानं शृणु महादेवि सर्वानन्दप्रदायकम् ।
सर्वसौख्यकरं चैव भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।१०९।

प्यारी पार्वती! अब गुरुके ध्यान को सुनो, जो सब आनन्द देने वाला है एव भोग और मोक्ष देने वाला है ।१०९।

श्रीमत्परं ब्रह्म गुरुं स्मरामि श्रीमत्परं ब्रह्म गुरुं भजामि ।
श्रीमत्परं ब्रह्म गुरुं वदामि श्रीमत्परं ब्रह्म गुरुं नमामि ।११०।

मैं श्रीमन परब्रह्म स्वरूप गुरु का स्मरण करता हूँ। उनकी बात कहता हूं और उनको प्रणाम करता हूँ ।११०।

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं ।
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं ।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ।१११।

जो गुरु ब्रह्मानन्द के स्वरूप है, सबसे बड़ा सुख देने वाला है, जिससे अलग कुछ भी नहीं है, जो ज्ञान स्वरूप है, सुख, दुःख, शीत, उष्ण आदि द्वन्दों से रहित है, आकाश के समान सूक्ष्म और व्यापी है, तत्वमसि आदि महावाक्यों का लक्ष्यार्थ है, जो एक

नित्य विमल और स्थिर है, सब ज्ञानों का साक्षी है, जिसको भावना से नहीं देख सकते, जिसमें तीनों गुण नहीं रहते हैं उस सद्गुरु को नमस्कार करता हूं ।१११।

हृदंबुजे कर्णिकमध्यसंस्थे सिंहासने संस्थितदिव्यमूर्तिम् ।
ध्यायेद्गुरुं चन्द्रकलाप्रकाशं सच्चित्सुखाभीष्टवरं दधानम् ।११२

हृदय कमल के बीज के बीच के स्थान में सिंहासन पर विराजमान, दिव्य विग्रह सहित चन्द्रमा के समान प्रकाश वाले सच्चिदानन्द मय इष्ट वरदान की मुद्रा धारण करने वाले गुरु का का ध्यान करे ।११२।

श्वेताम्बरं श्वेतविलेपपुष्पं मुक्ताविभूषं मुदितं द्विनेत्रम् ।
वामांकपीठस्थितदिव्यशक्तिं मन्दस्मितं पूर्णकृपानिधानम् ।११३।

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजभावयुक्तम् ।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि ।११४।

सफेद वस्त्र, सफेद पुष्प और सफेद विलेपन वाले मौक्तिक के आभूषण वाले दोनों आंखों में मोद स्फुरित होने वाले पीठ पर वाम भाग में दिव्य शक्ति के रहने वाले कृपा भरे, मुस्कुराने वाले आनन्दमय आनन्द करने वाले प्रसन्न ज्ञान स्वरूप, अपने भाव में स्थित, भवरोग के वैद्य योगीन्द्र प्रीतम गुरु को मैं रोज प्रणाम करता हूँ ।११३-११४।

वन्दे गुरूणां चरणारविन्दं संदर्शितस्वात्मसुखांबुधीनाम् ।
जनस्य येषां गुलिकायमानं संसारहालाहलमोहशान्त्यै ।११५।

अपने ही में स्थित सुख समुद्र को दिखाने वाले, गुरुओं के चरण अरविन्द का वन्दन कर रहा हूं जो कि संसार विष जनित मोह की शक्ति के लिए अचूक गोली का काम करते हैं ।११५।

यस्मिन् सृष्टिस्थितिध्वंसनिग्रहानुग्रहात्मकम् ।
कृत्यं पञ्चविधं शश्वत् भासते तं गुरुं भजेत् ।११६।

जिसमें सृष्टि, स्थिति, प्रलय, निग्रह और अनुग्रह—ये पाँचों प्रकार का काम प्रकाशमान हो जाता है उस गुरु का भजन करे ।११६।

पादाब्जे सर्वसंसारदावकालानलं स्वके ।
ब्रह्मरन्ध्रे स्थिताम्भोजमध्यस्थं चन्द्रमण्डलम् ।११७।
अकथादित्रिरेखाब्जे सहस्रदलमण्डले ।
हंसपार्श्वत्रिकोणे च स्मरेत्तन्मध्यगं गुरुम् ।११८।

सब संसार को जलाने वाली आग जिसके पद-कमल में रहती है, जो ब्रह्मरन्ध्र में स्थित कमल में चन्द्रमण्डल के समान विराजमान है और जो कि आकार, ककार, और यकार से शुरु होने वाली तीन रेखाओं के कमल में हजार दल वाले कमल में, और हंस स्थान के बगल में, त्रिकोण में, उनके मध्य बिन्दु में स्थित है उस गुरु का स्मरण करे ।११७-११८।

नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरञ्जनम् ।
नित्यबोधं चिदानन्दं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ।११९।

जो गुरु नित्य है, शुद्ध है, दीखता नही है, परम और आकार रहित है, ज्ञान स्वरूप और चिदानन्द ब्रह्म है उस गुरु को मैं प्रणाम कर रहा हूँ ।११९।

सकलभुवनसृष्टिः कल्पिताशेषसृष्टि- ।
र्निखिलनिगमदृष्टिः सत्पदार्थैकसृष्टिः ॥
अतद्गणपरमेष्टिः सत्पदार्थैकदृष्टिः ।
भवगुणपरमेष्टिर्मोक्षमार्गैकदृष्टिः ।१२०।

सकलभुवनरङ्गस्थापनास्तम्भयष्टिः ।
सकरुणरसवृष्टिस्तत्त्वमालासमष्टिः ॥
सकलसमयसृष्टिस्सच्चिदानन्ददृष्टि ।
र्निवसतु मयि नित्यं श्री गुरोर्दिव्यदृष्टिः ।१२१।

सब लोक की सृष्टि करने वाली सब सृष्टियों की कल्पना करने वाली, सब वेदों का दर्शन करने वाली, सत्य पदार्थों की सृष्टि करने वाली, असत्य पदार्थों में ब्रह्मा जी के रूप में रहने वाली, सत्य पदार्थों को देखने वाली, संसार के गुणों का मान करने वाली, मोक्षके मार्ग को दिखाने वाली, सब भुवनों की स्थापना के लिए खम्भे का काम करने वाली, करुणा रस की वर्षा करने वाली, सकल तत्वों सब समयों की सृष्टि करने वाली सच्चिदानन्द को देखने वाली श्री गुरू जो की दिव्य दृष्टि मुझ में हमेशा रहे।१२०-१२१।

न गुरोरधिकं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ।
शिवशासनतः शिवशासनतः शिवशासनतः शिवशासनतः ।१२२।

भगवान् शिव जी, जो मैं ही हूं—को आज्ञा के, बल से, गुरु की अपेक्षा कुछ भी बड़ा नहीं है, कुछ भी बड़ा नहीं है, कुछ भी बड़ा नहीं है ।१२२।

इदमेव शिवं इदमेव शिवं इदमेव शिवं इदमेव शिवं ।
हरिशासनतो हरिशासनतो हरिशासनतो हरिशासनतः ।१२३।

भगवान् विष्णु जी की आज्ञानुसार गुरु ही शिव है, गुरु ही शिव है, गुरु ही शिव है, गुरु ही शिव है।१२३।

विदितं विदितं विदितं विदितं विजनं विजनं विजनं विजनम् ।
विधिशासनतो विधिशासनतो विधिशासनतो विधिशासनतः।१२४।

ब्रह्मा जी के मन के अनुसार गुरु ही सकल ज्ञान का स्वरूप है, गुरु के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, और कुछ भी नहीं है।१२४।

एवंविधं गुरुं ध्यात्वा ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम् ।
तदा गुरूपदेशेन मुक्तोऽहमिति भावयेत् ।१२५।

ऐसे गुरु का ध्यान करने से ज्ञान अपने आप ही पैदा हो जायगा इसके बाद गुरु के उपदेश से मैं मुक्त हूं ऐसी भावना करनी चाहिए ।१२५।

गुरूपदिष्टमार्गेण मनःशुद्धिं तु कारयेत् ।
अनित्यं खण्डयेत् सर्वं यत्किञ्चिदात्मगोचरम् ।१२६।

गुरु के उपदेश के मार्ग से मन की शुद्धि करनी चाहिए जो कुछ भी अनित्य वस्तु मन का विषय हो जाता है उसका निराकरण करे।१२६।

ज्ञेयं सर्वं प्रतीतं च ज्ञानं च मन उच्यते ।
ज्ञानं ज्ञेयं समं कुर्यान्नान्यः पन्था द्वितीयकः ।१२७।

ज्ञान का विषय, ज्ञान की क्रिया और ज्ञान का प्रकाश—ये सब मन ही है। ज्ञान का विषय और ज्ञान की क्रिया को एक ही रूप में समझना चाहिए। इस मार्ग को छोड़कर दूसरा मार्ग मुक्ति के लिए नहीं है।१२७।

किमत्र बहुनोक्तेन शास्त्रकोटिशतैरपि ।
दुर्लभा चित्तविश्रान्तिः विना गुरुकृपाँ पराम् ।१२८।

ज्यादा कहने से क्या ? गुरु की बड़ी कृपा न हो तो हजारों करोड़ों शास्त्रों से भी मन को शान्ति नहीं मिलेगी ।१२८।

करुणाखड्गपातेन छित्वा पाशाष्टकं शिशोः ।
सम्यगानन्दजनकः सद्गुरुः सोऽभिधीयते ।१२९।

करुणा की तलवार से शिष्य के आठों पाशों को काट कर आनन्द का पैदा करने वाला ही गुरु कहा जाता है ।१२९।

एवं श्रुत्वा महादेवि गुरुनिन्दां करोति यः ।
स याति नरकान् घोरान् यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।१३०।

प्यारी पार्वती ! यह बात सुनने के बाद भी जो गुरु की निन्दा करता है वह सूर्य और चन्द्रमा के रहने के काल तक नरक घोर नरक में रहेगा ।१३०।

यावत्कल्पान्तको देहस्तावद्देवि गुरुं स्मरेत् ।
गुरुलोपो न कर्त्तव्यः स्वच्छन्दो यदि वा भवेत् ।१३१।

जितने कल्प काल में देह बन्ध हो जाता है उस काल तक गुरु का स्मरण करना। अपनी प्रज्ञा रहती है तो गुरु का विस्मरण न करना ।१३१।

हुंकारेण न वक्तव्यं प्राज्ञशिष्यैः कदाचन ।
गुरोरग्रे न वक्तव्यमसत्यं तु कदाचन ।१३२।

गुरु के सामने हूं शब्द करके नहीं बोलना, असत्य भी नहीं बोलना ।१३२।

गुरुं त्वंकृत्य हुंकृत्य गुरुसान्निध्यभाषणः ।
अरण्ये निर्जले देशे संभवेद्ब्रह्मराक्षसः ।१३३:

गुरु को 'तू' या 'हुँ' शब्द से बुलाकर जो बोलता है वह मरु-भूमि में ब्राह्मण बन जायगा ।१३३।

अद्वैतं भावयेन्नित्यं सर्वावस्थासु सर्वदा ।
कदाचिदपि नो कुर्यादद्वैतं गुरुसन्निधौ ।१३४।

सभी अवस्थाओं में अद्वैत की भावना करनी चाहिए तो भी गुरु के साथ अद्वैत भावना कभी भी नहीं करना ।१३४।

दृश्यविस्मृतिपर्यन्तं कुर्याद्गुरुपदार्चनम् ।
तादृशस्यैव कैवल्यं न च तद्व्यतिरेकिणः ।१३५।

जब तक इश्य की विस्मृति न होती हो तब तक गुरु जी की पदार्चना करनी चाहिए। ऐसा करने वाले को ही कैवल्य प्राप्त होगा, इससे उल्टा करने वाले को नहीं।१३५।

अपि संपूर्णतत्त्वज्ञो गुरुत्यागी भवेद्यदा।
भवत्येव हि तस्यान्तकाले विक्षेपमुत्कटम्।१३६।

सब तत्वों की जानकारी होने पर भी जो उस गुरु को छोड़ देते हैं तो उनको मरण काल में महान विक्षेप अवश्य हो जायगा।१३६।

गुरुकार्यं न लंघेत नापृष्ट्वा कार्यमाचरेत्।
न ह्युत्तिष्ठेद्दिशेऽनत्वा गुरुसद्भावशोभितः।१३७।

गुरु को अपनाने में जो साधक सफल होता है वह गुरु के कार्य का उलंघन नहीं करेगा, गुरु से बिना पूछे कार्य नहीं करेगा, गुरु के रहने की दिशा की तरफ बिना नमस्कार किए (प्रातः काल विचार से) नही उठेगा।१३७।

गुरौ सति स्वयं देवि परेषां तु कदाचन।
उपदेशं न वै कुर्यात् तदा चेद्राक्षसो भवेत्।१३८।

प्यारी पार्वती! गुरु के रहने पर किसी को उपदेश अपने आप नहीं देना, जो देगा वह राक्षस बन जायगा।१३८।

न गुरोराश्रमे कुर्यात् दुष्पानं परिसर्पणम्।
दीक्षा व्याख्या प्रभुत्वादि गुरोराज्ञां न कारयेत्।१३९।

गुरु के आश्रम में नशा आदि पीना, घूमना, दीक्षा और व्याख्या करना, प्रभुत्व दिखाना, गुरु का पण कखाना ये सब निषिद्धि हैं।१३९।

नोपाश्रमं च पर्यङ्कं न च पादप्रसारणम्।
नाङ्गभोगादिकं कुर्यान्न लीलामपरामपि।१४०।

गुरु के आश्रम में अपना छप्पर या पलंग बनाना, पैर पसारना मालिश करना, और ऐसे सब काम करना निषिद्धि है।१४०।

गुरूणां सदसद्वापि यदुक्तं तन्न लंघयेत्।
कुर्वन्नाज्ञां दिवा रात्रौ दासवन्निवसेद्गुरौ।।१४१।

गुरुओं की बात अच्छी हों या बुरी, उसे कभी नहीं टालना। दिन और रात गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए दास की तरह रहना।१४१।

अदत्तं न गुरोर्द्रव्यमुपभुञ्जीत कर्हिचित्।
दत्तं च रङ्कवद्ग्राह्यं प्राणोऽप्येतेन लभ्यते।१४२।

जो द्रव्य गुरु ने नहीं दिया है उसका उपयोग नहीं करना चाहिए। दिए हुए को भी गुलाम की तरह ग्रहण करना। उससे प्राण का धारण हो जायगा।१४२।

पादुकासनशय्यादि गुरुणा यदभीष्टितम्।
नमस्कुर्वीत तत्सर्वं पादाभ्यां न स्पृशेत् क्वचित्।१४३।

जूता, आसन, बिस्तर जो चीज गुरु के उपयोग होने वाली है उसको नमस्कार करना। पैर से कभी न छूना।१४३।

गच्छतः पृष्ठतो गच्छेत् गुरुच्छायां न लंधयेत् ।
नोल्बणं धारयेद्वेषं नालङ्काराँस्ततोल्बणान् ।१४४।

चलने वाले गुरु के पीछे चलना, उसकी परछाईं के ऊपर से नहीं चलना। उसके सामने बड़े वेष या आभूषण का धारण नहीं करना ।१४४।

गुरुनिन्दाकरं दृष्ट्वा धावयेदथ वासयेत् ।
स्थानं वा तत्परित्याज्यं जिह्वाच्छेदाक्षमो यदि ।१४५।

गुरु को निन्दा करने वाले को देखते हो तो उसकी जीभ नहीं काट सकते तो उसको अपने स्थान से भगा देना यदि वह रहता है, तो उस स्थान का अपने आप त्याग करना चाहिए ।१४५।

नोच्छिष्टं कस्यचिद्देयं गुरोराज्ञाँ न च त्यजेत् ।
कृत्स्नमुच्छिष्टमादाय हविर्वद्भक्षयेत् स्वयम् ।१४६।

छोड़ा हुआ भोजन गुरु का उच्छिष्ठ किसी को न देना, उसकी आज्ञा कभी न टालना, गुरु का पूरा उचिष्ठ लेकर हरिष मान कर अपने आप खाना चाहिए ।१४६।

नानृतं नाप्रियं चैव न गर्वं नापि वा बहु ।
न नियोगधरं ब्रूयात् गुरोराज्ञां विभावयेत् ।१४७।

गुरु के सामने मूल में पाठ बदलना, असत्य, अप्रिय, गर्व की या आज्ञाकारी बात न बोलना ।१४७।

प्रभो देवकुलेशानां स्वामिन् राजन् कुलेश्वर ।
इति सम्बोधनैर्भीतो सञ्चरेद् गुरुसन्निधौ ।१४८।

प्रभो, देव, कुलपतियों के स्वामी, महाराज कुल के ईश्वर, ऐसा सम्बोधन करके गुरु के पास जाना ।१४८।

मुनिभिः पन्नगैर्वापि सुरैर्वा शापितो यदि ।
कालमृत्युभयाद्वापि गुरुः संत्राति पार्वति ।१४९।

प्यारी पार्वती ! मुनियो, पन्नगों और देवताओं के शाप से और यथाकाल मृत्यु से भी गुरु शिष्य को बचा सकता है ।१४९।

अशक्तां हि सुराद्याश्च ह्यशक्ता मुनयस्तथा ।
गुरुशापोपपत्रस्य रक्षणाय च कुत्रचित् ।१५०।

गुरु के शाप से कोई मुनि देव या कोई अन्य नहीं बचा सकता ।१५०।

मन्त्रराजमिदं देवि गुरुरित्यक्षरद्वयम् ।
स्मृतिवेदपुराणानां सारमेव न संशयः ।१५१।

दो अक्षर वाला जो 'गुरु' मन्त्र है वह स्मृतियों, वेदों और पुराणों का सार ही है ।११५।

सत्कारमानपूजार्थं दण्डकाषायधारणः ।
स संन्यासी न वक्तव्यः संन्यासी ज्ञानतत्परः ।१५२।

सत्कार, मान्यता और पूजा प्राप्त करने के लिए डण्डा और गेरू धारण करने वाला सन्यासी नहीं कहा जाता। ज्ञान में तत्पर ही सन्यासी होता है।१५२।

विजानन्ति महावाक्यं गुरोश्चरणसेवया।
ते वै संन्यासिनः प्रोक्ता इतरे वेषधारिणः।१५३।

गुरु की चरण सेवा से महावाक्य के अर्थ को जो समझता है वे ही सन्यासी हैं और कोई तो केवल वेष धारी हैं।१५३।

नित्यं ब्रह्म निराकारं निर्गुणं बोधयेत् परम्।
भासयन् ब्रह्मभावं च दीपो दीपान्तरं यथा।१५४।

गुरु वह है जो निर्गुण निराकार, परब्रह्म को समझते हुए, एक दीप दूसरे दीप को जैसे प्रकाशित करते हैं उसी तरह शिष्य में ब्रह्मभाव को प्रकाशित करते हैं।१५४।

गुरुप्रसादतः स्वात्मन्यात्मारामनिरीक्षणात्।
समता मुक्तिमार्गेण स्वात्मज्ञानं प्रवर्तते।१५५।

गुरु की प्रसन्नता से अपनी आत्मा में अपने आनन्द को प्राप्त करके समत्व और मुक्ति मार्ग द्वारा आत्मज्ञान प्राप्त कर सकता है।१५५।

आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं परमात्मस्वरूपकम्।
स्थावरं जङ्गमं चैव प्रणमामि जगन्मयम्।१५६।

ब्रह्मा जी से शुरु होकर घास फूस तक के स्थावर और जंगम जगत ही जिसका स्वरूप है उस परमात्मा को मैं प्रणाम करता हूँ।१५६।

वन्देहं सच्चिदानन्दं भावातीतं जगद्गुरुम्।
नित्यं पूर्णं निराकारं निर्गुणं स्वात्मसंस्थितम्।१५७।

सच्चिदानन्द भावों से परे, नित्य, पूर्ण निराकार निर्गुण अपने ही में रहते हुए जगत के गुरु की में बन्दना करता हूं। १५७।

परात्परतरं ध्यायेन्नित्यमानन्दकारकम्।
हृदयाकाशमध्यस्थं शुद्धस्फटिकसन्निभम्।१५८।

उत्तम से उत्तम आनन्द नित्य प्रदान करने वाले, हृदय रूपी आकाश के मध्य में स्थित और शुद्ध स्फटिक के समान गुरु का ध्यान करना।१५८।

स्फटिके स्फाटिकं रूपं दर्पणे दर्पणो यथा।
तथात्मनि चिदाकारमानन्दं सोऽहमित्युत।१५९।

जैसे स्फुटिक में स्फुटिक की चीजें देखते हैं और जैसे दर्पण में दर्पण की छाया देखते हैं उसी प्रकार आत्मा आनन्द को 'वह मैं हूँ' देख सकते हैं। १५९।

अङ्गुष्ठमात्रं पुरुषं ध्यायेच्च चिन्मयं हृदि।
तत्र स्फुरति यो भावः शृणु तत्कथयामि ते।१६०।

अंगुष्ठ परिणाम वाले चिन्मय पुरुष का हृदय में ध्यान करना। तब जैसा विचार या भाव मन में हो जायगा वह अब मैं बोलूंगा सुनो।१६०।

अजोऽहममरोऽहं च ह्यनादिनिधनोह्यहम् ।
अविकारश्चिदानन्दो ह्यणीयान् महतो महान् ।१६१।

मैं पैदा होने वाला नहीं, मरने वाला नहीं, मुझे शुरु होना और खत्म होना नहीं मैं अविकार हूँ, चिदानन्द हूं, अणु से भी अणु हूं, बड़े से भी बडा हूं ।१६१।

अपूर्वमपरं नित्यं स्वयंज्योतिर्निरामयम् ।
विरजं परमाकाशं ध्रुवमानन्दमव्ययम् ।१६२।

मेरे पहले वाला कोई नहीं, बाद का भी कुछ नहीं, मैं नित्य हूँ, ज्योति हूँ, मुझे कोई अस्वस्थता न होगी, मुझमें कुछ मैला नहीं, मैं परम प्रकाश हूँ, मैं स्थिर अविनाशी आनन्द हूं । १६२।

अगोचरं तथाऽगम्यं नामरूपविवर्जितम् ।
निःशब्दं तु विजानीयात्स्वभावाद्ब्रह्म पार्वति ।१६३।

प्यारी पार्वती ! ब्रह्म को स्वभाव से ही अगोचर, अगम्य, नामरुपों से रहित और शब्दहीन समझना चाहिए ।१६३।

यथा गन्धस्वभावत्वं कर्पूरकुसुमादिषु ।
शीतोष्णत्वस्वभावत्वं तथा ब्रह्मणि शाश्वतम् ।१६४।

जैसे कपूर और फूलों में गन्ध और पानी में शीतलता और आग में गरमी स्वभाव से होते हैं उसी तरह ब्रह्म में नित्यत्व भी स्वभाव सिद्ध है ।१६४।

यथा निजस्वभावेन कुण्डलकटकादयः ।
सुवर्णत्वेन तिष्ठन्ति तथाऽहं ब्रह्म शाश्वतम् ।१६५।

जैसे कुण्डल कटक आदि आभूषण स्वभाव से ही स्वर्ण होता है वैसे ही मैं स्वभाव से ही ब्रह्म होता हूँ ।१६५।

स्वयं तथाविधो भूत्वा स्थातव्यं यत्रकुत्रचित् ।
कीटो भृङ्गइवध्यानाद्यथा भवति तादृशः ।१६६।

स्वयं वैसा होकर किसी न किसी स्थान में रहना जैसे कीड़ा ध्यान में भौंरा हो जाता है वैसे ही जीव ध्यान से ब्रह्म हो जाता है ।१६६।

गुरुध्यानं तथा कृत्वा स्वयं ब्रह्ममयो भवेत् ।
पिण्डे पदं तथा रूपं मुक्तास्ते नात्र संशयः ।१६७।

जो जैसे गुरु का ध्यान करके ब्रह्ममय हो जाता है वह पिण्ड में पद और रूप में मुक्त हो जाता है इसमें संशय नहीं ।१६७।

पार्वत्युवाचः

पिण्डं किंतु महादेव पदं किं समुदाहृतम् ।
रूपातीतं च रूपं किंएतदाख्याहि शंकर ।१६८।

पार्वती देवी बोलती है कि भगवान् ! पिण्ड क्या है । ? पद क्या है ? रूप क्या है ? और रूपातीत क्या है ? यह बताओ ।१६८।

श्री महादेव उवाच :

पिण्डं कुण्डलिनी शक्तिः पदं हंसमुदाहृतम् ।
रूपं बिन्दुरिति ज्ञेयं रूपातीतं निरञ्जनम् ।१६९।

महादेव बोले—कुण्डलिनी ही पिण्ड है, हंस ही पद है, बिन्दु ही रूप है, शुद्ध ब्रह्म ही रूपातीत है ।१६९।

पिण्डे मुक्ताः पदे मुक्ता रूपे मुक्ता वरानने ।
रूपातीते तु ये मुक्तास्ते मुक्ता नात्र संशयः ।१७०।

हे पार्वती ! पहले पिण्ड में मुक्त होकर फिर पद में मुक्त होकर, फिर रूप में मुक्त होकर, जो अन्त में रूपातीत में मुक्त हो जाता है, वह मुक्त ही हैं, संशय नहीं हैं ।१७०।

गुरोर्ध्यानेनैव नित्यं देही ब्रह्ममयो भवेत् ।
स्थितश्च यत्रकुत्रापि मुक्तोऽसौ नात्र संशयः ।१७१।

हमेशा गुरु का ध्यान करने से ही जीव ब्रह्म हो जाता है वह किसी स्थान में रहने पर भी मुक्त हो जाता है ।१७१।

ज्ञानं वैराग्यमैश्वर्यं यशः श्रीः समुदाहृतम् ।
षडगुणैश्वर्ययुक्तो हि भगवान् श्रीगुरुः प्रिये ।१७२।

ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, कीर्ति, श्रीमता और वचन की भलाई ये छहों गुण श्री गुरु में रहेंगे ।१७२।

गुरुः शिवो गुरुर्देवो गुरुर्बन्धुः शरीरिणाम् ।
गुरुरात्मा गुरुर्जीवो गुरोरन्यन्न विद्यते ।१७३।

मानवों का गुरु ही शिव है, गुरु ही देवता है, गुरु ही बन्धु है. गुरु ही आत्मा है, गुरु ही जीव है, गुरु के सिवा कुछ भी नहीं ।१७३।

एकाकी निस्पृहः शान्तश्चिन्तासूयादिवर्जितः ।
बाल्यभावेन यो भाति ब्रह्मज्ञानी स उच्यते ।१७४।

अकेला होकर कामनाओं को छोड़कर, शान्ति के साथ, चिन्ता असूया ? आदि से रहित, बालक की तरह जो रहता है वह ब्रह्म-ज्ञानी कहा जाता है ।१७४।

न सुखं वेदशास्त्रेषु न सुखं मन्त्रयन्त्रके ।
गुरोः प्रसादादन्यत्र सुखं नास्ति महीतले ।१७५।

वेद या शास्त्रों में सुख नहीं, मन्त्र या यन्त्र में भी सुख नहीं । जगत में गुरु के प्रसाद को छोड़कर किसी में सुख नहीं ।१७५।

चार्वाकवैष्णवमते सुखं प्राभाकरे नहि ।
गुरोः पादान्तिके यद्वत्सुखं वेदान्तसम्मतम् ।१७६।

गुरु के चरणों के पास जैसा सुख है, वैसा सुख चार्वाकमत में नहीं, वैष्णव मत में नहीं, प्रभाकर मत में भी नहीं, यह बात वेदान्त की मानी है ।१७६।

न तत्सुखं सुरेन्द्रस्य न सुखं चक्रवर्तिनाम् ।
यत्सुखं वीतरागस्य मुनेरेकान्तवासिनः ।१७७।

कामनाओं को छोड़कर एकान्त में रहने वाले को जो सुख है, वह सुख देवराज को भी नहीं है, चक्रवर्तियों को भी नहीं ।१७७।

नित्यं ब्रह्मरसं पीत्वा तृप्तो यः परमात्मनि ।
इन्द्रं च मन्यते रङ्कं नृपाणां तत्र का कथा ।१७८।

ब्रह्म का रस हमेशा पीकर परमात्मा में जिसने सुख प्राप्त किया है, वह देवराज को गरीब मानता है, नरेशों की बात ही क्या है ।१७८।

यतः परमकैवल्यं गुरुमार्गेण वै भवेत् ।
गुरुभक्तिरतिः कार्या सर्वदा मोक्षकांक्षिभिः ।१७९।

मोक्ष की आकांक्षा करने वालों को गुरु भक्ति खूब करनी चाहिए, क्योंकि गुरु के द्वारा ही परम मोक्ष प्राप्त हो सकता है ।१७९।

एक एव द्वितीयोऽहं गुरुवाक्येन निश्चितः ।
एवमभ्यस्यता नित्यं न सेव्यं वै वनान्तरम् ।१८०।

मैं अद्वितीय एक ही हूं, यह बात गुरु के वाक्य ने निश्चय किया है, ऐसा अभ्यास करने वालों को वन में रहने की जरूरत नहीं है ।१८०।

अभ्यासान्निमिषेणैव समाधिमधिगच्छति ।
आजन्मजनितं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ।१८१।

अभ्यास हो तो एक निमिष में समाधि हो जाती है, जन्मकाल से गुरु करके जो पाप किया है वह उसी क्षण में नष्ट होता है ।१८१।

किमावाहनमव्यक्ते व्यापके किं विसर्जनम् ।
अमूर्त्तौ च कथं पूजा कथं ध्यानं निरामये ।१८२।

अव्यक्त का आवाहन कैसा होगा ? व्यापक का छोड़ना कैसा होगा ? अमूर्त की पूजा कैसी होगी ? अरूप का ध्यान कैसा होगा ।१८२।

गुरुर्विष्णुः सत्वमयो राजसश्चतुराननः ।
तामसो रुद्ररूपेण सृजत्यवति हन्ति च ।१८३।

गुरु ही सात्विक विष्णु भगवान् होकर सृष्टि करता है, राजस ब्रह्मा जी होकर पालन करता है, और तामस रुद्र होकर हनन भी करता है ।१८३।

स्वयं ब्रह्ममयो भूत्वा तत्परं चावलोकयेत् ।
परात्परतरं नान्यत् सर्वगं च निरामयम् ।१८४।

अपने आप ब्रह्ममय होकर सर्वव्यापक दुःख से रहित परम तत्व को देखना चाहिए, और किसी को नहीं देखना ।१८४।

तस्यावलोकनं प्राप्य सर्वसङ्गविवर्जितः ।
एकाकी निस्पृहः शान्तः स्थातव्यं तत्प्रसादतः ।१८५।

गुरु का दर्शन पाकर अपनी प्रसन्नता से सर्वसङ्ग को छोड़कर एकाकी निस्पृह और शांत होकर रहना ।१८५।

लब्धं वाऽथ न लब्धं वा स्वल्पं वा बहुलं तथा ।
निष्कामेनैव भोक्तव्यं सदा सन्तुष्टमानसः ।१८६।

मिला है या नहीं मिला है, थोड़ा हो या बहुत हो, सदा संतुष्ट होकर निष्काम से ही खाना पीना करना । ८६।

सर्वज्ञपदमित्याहुर्देही सर्वमयो भुवि ।
सदाऽनन्दः सदा शान्तो रमते यत्रकुत्रचित् ।१८७।

जगत में जो जीव सर्वमय सदा आनन्दमय और शान्त होकर जिस किसी वस्तु में संतोष करता है वही सर्वज्ञपद कहा जाता है ।१८७।

यत्रैव तिष्ठते सोऽपि स देशः पुण्यभाजनः ।
मुक्तस्य लक्षणं देवि तवाग्रे कथितं मया ।१८८।

ऐसा पुरुष जहाँ रहता है वह प्रदेश पुण्य तीर्थ है ! प्यारी पार्वती ! मुक्ति का लक्षण, तुम्हारे सामने अब कह चुका हूँ ।१८८।

उपदेशस्त्वयं देवि गुरुमार्गेण मुक्तिदः ।
गुरुभक्तिस्तथात्यन्ता कर्त्तव्या वै मनीषिभिः ।१८९।

गुरु मार्ग से यह उपदेश मुक्ति देने वाला है। इसलिए बुद्धिमानों को गुरु में अत्यन्त भक्ति करनी चाहिए ।१८९।

नित्ययुक्ताश्रयः सर्वो वेदकृत्सर्ववेदकृत् ।
स्वपरज्ञानदाता च तं वन्दे गुरुमीश्वरम् ।१९०।

अपने ही स्थान में रह कर सब वेदों को करने वाला और अपने का और दूसरे का ज्ञान देने वाला जो गुरु है उस ईश्वर की मैं वन्दना करता हूँ ।१९०।

यद्यव्यधीता निगमाः षडङ्गा आगमाः प्रिये ।
अध्यात्मादीनि शास्त्राणि ज्ञानं नास्ति गुरुं विना ।१९१।

छठे अंग वाले वेद, इतिहास और अध्यात्म आदि शास्त्रों को पढ़े हुये हो तो भी गुरु के बिना ज्ञान नहीं मिलेगा ।१९१।

शिवपूजारतो वापि विष्णुपूजारतोऽथवा ।
गुरुतत्त्वविहीनश्चेत्तत्सर्वं व्यर्थमेव हि ।१९२।

शिव जी की पूजा करते हो या विष्णु भगवान की गुरु के बिना सब व्यर्थ है ।१९२।

शिवस्वरूपमज्ञात्वा शिवपूजा कृता यदि ।
सा पूजा नाममात्रं स्याच्चित्रदीप इव प्रिये ।१९३।

शिव जी के स्वरुप का ज्ञान नहीं होने पर शिव पूजा करना चित्र में दिखाये गए दीप की तरह काम का नहीं होता ।१९३।

सर्वं स्यात्सफलं कर्म गुरुदीक्षाप्रभावतः ।
गुरुलाभात्सर्वलाभो गुरुहीनस्तु बालिशः।१९४।

गुरु की पूजा के प्रभाव से ही सब कर्म सफल हो जाता है। गुरु के लाभ से सबका लाभ होगा। गुरु के नहीं होने पर कुछ भी नहीं होगा ।१९४।

गुरुहीनः पशुः कीटः पतङ्गो वक्तुमर्हति ।
शिवरूपं स्वरूपं च न जानाति यतस्खयम् ।१९५।

गुरु हीन को पशु, कीड़ा या चिड़िया बुलाना चाहिए क्योंकि वह अपना या शिव का तत्व नहीं समझता ।१९५।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वसङ्गविवर्जितः ।
विहाय शास्त्रजालानि गुरुमेव समाश्रयेत् ।१९६।

इस कारण सब तरह का प्रयत्न करके, सर्व संग से मुक्त होकर सभी शास्त्रों को छोड़कर गुरु का आश्रय लेना चाहिए ।१९६।

निरस्तसर्वसन्देहो एकीकृत्य सुदर्शनम् ।
रहस्यं यो दर्शयति भजामि गुरुमीश्वरम् ।१९७।

सब संशयों को दूर करके परम रहस्य को निश्चित रूप से एक करके जो दिखलाता है उस गुरु रूपी ईश्वर का मैं भजन करता हूं ।१९७।

ज्ञानहीनो गुरुस्त्याज्यो मिथ्यावादी विडंबकः ।
स्वविश्रान्तिं न जानाति परशान्तिं करोति किम् ।१९८।

ज्ञान रहित, मिथ्या बोलने वाले और दिखावट करने वाले गुरु को छड़ोना चाहिए, क्योंकि वह अपनी ही शान्ति नहीं कर सकता, दूसरे को शान्ति क्या दे सकेगा ? ।१९८।

शिलायाः किं परं ज्ञानं शिलासंधप्रतारणे ।
स्वयं ततुं न जानाति परं निस्तारयेत् कथम् ।१९९।

एक पत्थर, दूसरे किसी पत्थर को नहीं ले जा सकता हे? जो अपने को पार नहीं कर सकता, वह दूसरे को पार कैसे कर सकेगा ? ।१९९।

न वन्दनीयास्ते कष्टं दर्शनाद्भ्रान्तिकारकाः ।
वर्जयेत्तान् गुरून् दूरे धीरानेव समाश्रयेत् ।२००।

जो तर्क से भ्रम पैदा करते हैं, उनको वन्दना नहीं करना चाहिए, वैसे गुरुओं को दूर तक छोड़ना चाहिए। बुद्धिमानी का आश्रम लेना चाहिए। ।२००।

पाषण्डिनः पापरता नास्तिका भेदबुद्धयः ।
स्त्रीलम्पटा दुराचाराः कृतघ्ना बकवृत्तयः ।२०१।
कर्मभ्रष्टाः क्षमानष्टा निन्द्यतर्कैश्च वादिनः ।
कामिनः क्रोधिनश्चैव हिंस्राश्चण्डाः शठास्तथा ।२०२।
ज्ञानलुप्ता न कर्त्तव्या महापापास्तथा प्रिये ।
एम्यो भिन्नो गुरुः सेव्य एकभक्त्या विचार्य च ।२०३।

वेद या अप्रमाण मानने वाले, पाप करने वाले, ईश्वर को नहीं मानने वाले, भेद करने वाले, स्त्रीसवन्त दुराचार करने वाले, उपकार का स्मरण रहीं करने वाले, चुप रह कर दूसरों को बुराई में लगाने वाले, भ्रष्ट कर्म करने वाले, गलत तर्कों से वाद करने वाले, काम, क्रोध या हिंसा करने वाले और शठता या अज्ञान या महापाप करने वाले, क्रूरता करने वाले, इनमें से कि ी को गुरु नहीं बनाना चाहिए । इनके अतिरिक्त गुरु को विचार करके भक्ति के साथ सेवा करनी चाहिए ।२०१-२०२-२०३।

शिष्यादन्यत्र देवेशि न वदेद्यस्य कस्यचित् ।
नराणां च फलप्राप्तौ भक्तिरेव हि कारणम् ।२०४।

हे पार्वती ! गुरु को शिष्य से ही तत्व बताना चाहिए, और किसी से नहीं । मानव की फल प्राप्ति में भक्ति ही कारण है ।२०४।

गूढो दृढ़श्च प्रीतश्च मौनेन सुसमाहितः ।
सकृत्कामगतो वापि पञ्चधा गुरुरीरितः ।२०५।

तत्व को रहस्य रखने वाला, निश्चय रूप से जानने वाला, सन्तुष्ट, मौन में सावधान और एक बार काम प्राप्त किये हुए—ऐसे को गुरु कहा जाता है ।२०५।

सर्वं गुरुमुखाल्लब्धं सफलं पापनाशनम् ।
यद्यदात्महितं वस्तु तत्तद्द्रव्यं न वञ्चयेत् ।२०६।

गुरु के द्वारा मिला हुआ सब कुछ सफल होगा और पाप को मिटा देगा । अपने लिए जो वस्तु होनी चाहिए उसे वंचना से नहीं लेना २०६।

गुरुदेवार्पणं वस्तु तेन तुष्ठोऽस्मि सुव्रते ।
श्रीगुरोः पादुकां मुद्रां मूलमन्त्रं च गोपयेत् ।२०७।

हे पार्वती गुरुदेव की अर्पण की हुई वस्तु से मैं सन्तुष्ट हूँ । श्री गुरु की पादुका को, मुद्रा को, और मूल मन्त्र को छिपाकर रखना चाहिये ।२०७।

नतास्मि ते नाथ पदारविन्दं बुद्धीन्द्रियप्राणमनोवचोभिः ।
यच्चिन्त्यते भावित आत्मयुक्तौ मुमुक्षुभिः कर्ममयोपशान्तये ।२०८।

पार्वती जी ने कहा—हे भगवान मोक्ष की कामना करने वाले कर्म बन्ध के पास के लिए बुद्धि इन्द्रिय प्राण मन और वाक् से जिसकी भावना करके आत्म के योग (एकता) में चिन्तन करते हैं आपके उस पदार बिन्दु को मैं प्रणाम करती हूँ ।२०८।

अनेन यद्भवेत्कार्यं तद्वदामि तव प्रिये ।
लोकोपकारकं देवि लौकिकं तु विवर्जयेत् ।२०९।

भगवान ने कहा—इस से क्या प्रयोजन होगा ? यह आगे कहूँगा । यह लोक के लिए उपकारक है अर्थात् आलौकिक है केवल लौकिक को छोड़ना चाहिए ।२०९।

लौकिकाद्धर्मतो याति ज्ञानहीनो भवार्णवे ।
ज्ञानभावे च यत्सर्वं कर्म निष्कर्म शाम्यति ।२१०।

लौकिक—कृषि आदि कर्म से तो ज्ञान न पाकर संसार समुद्र में पड़ेंगे। ज्ञान के पाने से कर्म निष्कर्म होकर नष्ट हो जाता है ।२१०।

इमां तु भक्तिभावेन पठेद्वै शृणुयादपि ।
लिखित्वा यत्प्रसादेन तत्सर्वं फलमश्नुते ।२११।

इस गीता को पढ़ने से, सुनने से और लिख देने से पूरा फल मिलेगा ।२११।

गुरुगीतामिमां देवि हृदि नित्यं विभावय ।
महाव्याधिगतैर्दुःखैः सर्वदा प्रजपेन्मुदा ।२१२।

प्यारी पार्वती ! इस गुरु गीता को मन में हमेशा रख लो बड़े-२ बीमारी वाले भी इसका मन लगाकर जप करें ।२१२।

गुरुगीताक्षरैकैकं मन्त्रराजमिदं प्रिये ।
अन्ये च विविधा मन्त्राः कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।२१३।

गुरु गीता का एक-२ अक्षर बड़ा मंत्र है दूसरे जो-२ मंत्र कहे जाते हैं, वह इसकी सोलहवीं कला तक नहीं होती है ।२१३।

अनन्तफलमाप्नोति गुरुगीताजपेन तु ।
सर्वपापहरा देवि सर्वदारिद्र्यनाशिनी ।२१४।

हे देवी ! गुरु गीता के जप से अनन्त फल मिलेगा । वह सर्व पाप और सर्व दारिद्रय् को दूर करती है ।२१४!

अकालमृत्युहन्त्री च चैव सर्वसङ्कटनाशिनी ।
यक्षराक्षसभूतादिचोरव्याघ्रविघातिनी ।२१५।

गुरु गीता अकाल मृत्यु को रोकती है, सब संकटों का नाश करती है, यक्ष, राक्षस, भूत, चोर, व्याघ्र आदि को भी हटा देती है ।२१५।

सर्वोपद्रवकुष्ठादिदुष्टदोषनिवारिणी ।
यत्फलंगुरु सान्निध्यात्तत्फलं पठनाद्भवेत् ।२१६।

गुरु गीता सब प्रकार के उपद्रवों तथा कुष्ठ आदि रोगों का भी निवारण करेगी । गुरु की भक्ति ध्यान से जो-जो फल मिलेगा, वह सब गुरु गीता को पढ़ने से मिलेगा ।२१६।

महाव्याधिहरा सर्वविभूतेः सिद्धिदा भवेत् ।
अथवा मोहने वश्ये स्वयमेव जपेत्सदा ।२१७।

गुरु गीता महाव्याधियों को दूर करेगी और सब ऐश्वर्य की सिद्धि कर देगी मोहन या वश्य कार्यों में भी इसका जप करना उचित है ।२१७।

कुशदूर्वासने देवि ह्यासने शुभ्रकम्बले ।
उपविश्य ततो देवि जपेदेकाग्रमानसः ।२१८।

कुश और दूर्वा के आसन पर सफेद कम्बल बिछाकर, उस पर आसन बाँध करके, बैठ कर मन की एकाग्रता करके जप करना चाहिए ।२१८।

शुक्लं सर्वत्र वै प्रोक्तं वश्ये रक्तासनं प्रिये ।
पद्मासने जपेन्नित्यं शान्तिवश्यकरं परम् ।२१९।

मामूली तौर पर सफेद कम्बल उचित है परन्तु वश्य कार्यों में लाल रंग आवश्यक है । आसन पर बैठकर जप करना सभी अवस्था में स्वीकार्य है ।२१९।

वस्त्रासने च दारिद्र्यं पाषाणे रोगसम्भवः ।
मेदिन्यां दुःखमाप्नोति काष्ठे भवति निष्फलम् ।२२०।

कपड़े के आसन में दरिद्रता, पत्थर के आसन में रोग, जमीन के आसन में दम्भ और काठ के आसन से फल की हानि ही होगी ।२२०।

कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिर्मोक्षश्रीर्व्याघ्रचर्मणि ।
कुशासने ज्ञानसिद्धिः सर्वसिद्धिस्तु कम्बले ।२२१।

व्याघ्र के छाल में मोक्ष की सिद्धि, कुशासन में भी ज्ञान की सिद्धि और कम्बल में सब सिद्धि होगी । २२१।

आग्नेय्यां कर्षणं चैव वायव्यां शत्रुनाशनम् ।
नैर्ऋत्यां दर्शनं चैव ईशान्यां ज्ञानमेव च ।२२२।

अग्नि कोण में आसन करने से आकर्षण, वायु कोण में करने से शत्रु विनाश, नैऋति कोण में करने से दर्शन और ईश कोण में करने से ज्ञान होगा ।२२२।

उदङ्मुखः शान्तिजप्ये वश्ये पूर्वमुखस्तथा ।
याम्ये तु मरणं प्रोक्तं पश्चिमे च धनागमः ।२२३।

शान्ति के लिए उत्तर की ओर, वश्य के लिए पूर्व की ओर मारण के लिए दक्षिण की ओर और धन के लिए पश्चिम की ओर मुख करके जप करें ।२२३।

मोहनं सर्वभूतानां बन्धमोक्षकरं परम् ।
देवराज्ञां प्रियकरं राजानं वशमानयेत् ।२२४।

यह गीता सब मंत्र सब जीवियों को अपनाने वाला है, बन्धन से मोक्ष देने वाला है और राजाओं को भी अपने वश में लाने वाला है ।२२४।

मुखस्तम्भकरं चैव गुणानां च विवर्धनम् ।
दुष्कर्मनाशनं चैव तथा सत्कर्मसिद्धिदम् ।२२५।

यह मंत्र नरक को रोकने वाला है, गुणों को बढ़ाने वाला है, दुष्कर्म को नाश करने वाला है, और सत्कर्म की सिद्धि भी करने वाला है ।२२५।

श्मशाने बिल्वमूले वा वटमूलान्तिके तथा ।
सिद्ध्यन्ति कानके मूले चूतवृक्षस्य सन्निधौ ।२४०।

शमशान में विलव या कनक वृक्ष के नीचे. वट वृक्ष या आम्र वृक्ष के समीप में जप करने से फल सिद्धि जल्दी होगी ।२४०।

पीतासनं मोहने तु ह्यसितं चाभिचारिके ।
ज्ञेयं शुक्लं च शान्त्यर्थं वश्ये रक्तं प्रकीर्तितम् ।२४१।

मोहक कार्य में पीला आसन, अभिचार में काला, शान्ति के लिए सफेद और वश्य कार्य में लाल आसन अच्छा है ।२४१।

जपं हीनासनं कुर्वन् हीनकर्माफलप्रदम् ।
गुरुगीतां प्रयाणे वा संग्रामे रिपुसंकटे ।२४२।

जपन् जयमवाप्नोति मरणे मुक्तिदायिका ।
सर्वकर्माणि सिद्ध्यन्ति गुरुपुत्रे न संशयः ।२४३।

बिना आसन किये जप नीच कर्म होगा, और फल नहीं प्राप्त होगा । यात्रा में, युद्ध में, शत्रुओं के उपद्रव में गुरु गीता का जप करने से जय होगी, मरणकाल में जप करने से मोक्ष मिलेगा, गुरु सेवा में किए सब कर्म फलवान होंगे दूसरे नहीं ।२४२-२४३।

गुरुमन्त्रो मुखे यस्य तस्य सिद्ध्यन्ति नान्यथा ।
दीक्षया सर्वकर्माणि सिद्ध्यन्ति गुरुपुत्रके ।२४४।

जिसके मुख में गुरु मन्त्र है उसका सब कर्म फलवत होगा, दूसरे का नहीं । गुरु मंत्र वाले के कर्म का फल दीक्षा से सिद्ध होगा ।२४४।

भवमूलविनाशाय चाष्टपाशनिवृत्तये ।
गुरुगीताम्भसि स्नानं तत्त्वज्ञः कुरुते सदा ।२४५।

संसार की जड़ नष्ट करने के लिए और आठ पाशों की निवृत्ति के लिए तत्व ज्ञानी लोग गुरु गीता के पानी में हमेशा स्नान करते हैं ।२४५।

स एव सद्गुरुः साक्षात् सदसद्ब्रह्मवित्तमः ।
तस्य स्थानानि सर्वाणि पवित्राणि न संशयः ।२४६।

वही साक्षात् सद्गुरु और सद्ब्रह्म को अच्छी तरह जानने वाला है, उसके रहने की सब जगह पवित्र ही है, कोई शंका नहीं है ।२४६।

सर्वशुद्धः पवित्रोऽसौ स्वभावाद्यत्र तिष्ठति ।
तत्र देवगणाः सर्वे क्षेत्रपीठे चरन्ति च ।२४७।

स्वभाव से पवित्र और सब प्रकार से शुद्ध वह पुरुष जहाँ रहता है उस स्थान में सारे देवगण आया करते हैं ।२४७।

आसनस्थाः शयाना वा गच्छन्तस्तिष्ठन्तोऽपि वा ।
अश्वारुढ़ा गजारुढ़ाः सुषुप्ता जाग्रतोऽपि वा ।२४८।

लिखित्वा पूजयेद्यस्तु मोक्षश्रियमवाप्नुयात् ।
गुरुभक्तिविशेषेण जायते हृदि सर्वदा ।२३४।

इस गीता को लिख कर पूजा करे तो मोक्ष की झलक प्राप्त होगी, गुरु पर भक्ति विशेष के कारण वह झलक मन में हमेशा रहेगी ।२३४।

जपन्ति शाक्ताः सौराश्च गाणपत्याश्च वैष्णवाः ।
शवाः पाशुपताः सर्वे सत्यंसत्यं न संशयः ।२३५।

इस गीता को सौर, गाणपत्य वैष्णव, पाशुपत आदि सब मत वाले पढ़ते हैं, यह सत्य है, यह सत्य है ।२३५।

।। इति श्रीस्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वरसंवादे
श्री गुरुगीतायां द्वितीयोऽध्यायः ।।
इसी प्रकार श्री स्कान्दोत्तरखण्ड में पार्वती-शिव संवाद में
श्री गुरुगीता का द्वितीय अध्याय की समाप्ति ।

—●—

तीसरा अध्याय

●

अथ काम्यजपस्थानं कथयामि वरानने ।
सागरान्ते सरित्तीरे तीर्थं हरिहरालये ।२३६।

शक्तिदेवालये गोष्ठे सर्वदेवालये शुभे ।
वटस्य धात्र्या मूले वा मठे वृन्दावने तथा ।२३७।

पवित्रे निर्मले देशे नित्यानुष्ठानतोऽपि वा ।
निर्वेदनेन मौनेन जपमेतत् समारभेत् ।२३८।

अब कामना के साथ जप करने की बात बताऊंगा । समुद्र के या नदी के किनारे में, किसी तीर्थ स्थान में, शिव जी या विष्णु जी के मन्दिर में, देवी मन्दिर में, गौशाला में, किसी देव के मन्दिर में वट वृक्ष, या आँवला वृक्ष के नीचे, किसी मठ में, या वृन्दावन में, पवित्र और निर्मल स्थान और बैठ कर नित्यानुष्ठान रूप से या वैराग्य से मौन धारण करके इस जाप का आरम्भ करना ।२३६-२३७-२३८।

जाप्येन जयमाप्नोति जपसिद्धिं फलं तथा ।
हीनं कर्म त्यजेत्सर्वं गर्हितस्थानमेव च ।२३९।

जप से जय होगा । जप सिद्धि रूप फल भी होगा । जप काल में नीच कर्म और नीच स्थान का त्याग करना ।२३९।

असिद्धं साधयेत्कार्यं नवग्रहभयापहम् ।
दुःस्वप्ननाशनं चैव सुस्वप्नफलदायकम् ।२२६।

यह मंत्र असाध्य कार्य की सिद्ध करने वाला है, नव ग्रहों के दोष को दूर करने वाला है, दुःस्वप्न का नाश करने वाला है और सुख फल का देने वाला भी है ।२२६।

मोहशान्तिकरं चैव बन्धमोक्षकरं परम् ।
स्वरूपज्ञाननिलयं गीताशास्त्रमिदं शिवे ।२२७।

प्यारी पार्वती ! यह गीता मंत्र बेहोशी को दूर करने वाला, बन्धन को छुड़ाने वाला और स्वरूप का ज्ञान देने वाला है ।२२७।

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चयम् ।
नित्यं सौभाग्यदं पुण्यं तापत्रयकुलापहम् ।२२८।

जो अभिलाषा करके कोई व्यक्ति गुरु गीता का जप करता है, वह निश्चय ही प्राप्त होता है, यह सौभाग्य को देने वाली, पुण्य रूपों और तीन प्रकार के तापों का नाश करने वाली भी है ।२२८।

सर्वशान्तिकरं नित्यं तथा वन्ध्यासुपुत्रदम् ।
अवैधव्यकरं स्त्रीणां सौभाग्यस्य विवर्धनम् ।२२९।

सब प्रकार की शान्ति करने वाली । बन्ध्या को पुत्रवती करने वाली, स्त्रियों को वैधव्य निवारण करने वाली और सौभाग्य का वर्धन करने वाली है ।२२९।

आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम् ।
निष्कामजापी विधवा पठेन्मोक्षमवाप्नुयात् ।२३०।

यह आयु आरोग्य, ऐश्वर्य, पुत्रों और पौत्रों का प्रवर्धन करने वाली है । कोई विधवा निष्काम होकर इसका जप करे तो मोक्ष प्राप्त होगा ।२३०।

अवैधव्यं सकामा तु लभते चान्यजन्मनि ।
सर्वदुःखमयं विघ्नं नाशयेत्तापहारकम् ।२३१।

सकाम होकर जप करे तो अगले जन्म में अविधवा ही रहेगी । इसका जप सब दुःख का, विघ्न का और ताप का नाश करेगा ।२३१।

सर्वपापप्रशमनं धर्मकामार्थमोक्षदम् ।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ।२३२।

सब पापों का प्रशमन करेगा, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देगा, जो-जो कामना करेगा वह प्राप्त होगा ।२३२।

काम्यानां कामधेनुर्वै कल्पिते कल्पपादपः ।
चिन्तामणिश्चिन्तितस्य सर्वमङ्गलकारकम् ।२३३

काम की सिद्धि करने में कामधेनु है, कल्पित की सिद्धि करने में कल्प-वृक्ष है, चिन्तित की सिद्धि करने में चिन्तामणि है, इस प्रकार सब मंगल देने वाला है ।२३३।

शुचिभूता ज्ञानवन्तो गुरुगीताँ जपन्ति ये ।
तेषां दर्शनसंस्पर्शात् पुनर्जन्म न विद्यते ।२४६।

आसन पर बैठे हुए, लेटे हुए, चलने वाले, खड़े होने वाले, घोड़े या हाथी पर बैठने वाले, सोने वाले या जागने वाले, जो लोग अर्थ समझ कर गुरु गीता का जप करते हैं, उनके दर्शन या स्पर्श से पुर्नजन्म खत्म हो जाता है ।२४८-२४६।

समुद्रे वै यथा तोयं क्षीरे क्षीरं जले जलम् ।
भिन्ने कुम्भे यथाऽऽकाशं तथाऽऽत्मा परमात्मनि ।२५०।

जैसे समुद्र में जल, दूध में दूध, पानी में पानी और घट में आकाश एक ही है वैसे परमात्मा में जीवात्मा भी एक ही है ।२५०।

तथैव ज्ञानवान् जीवः परमात्मनि सर्वदा ।
ऐक्येन रमते ज्ञानी यत्र कुत्र दिवानिशम् ।२५१।

उसी प्रकार ज्ञान वाला जीवात्मा परमात्मा में एक होकर जहाँ रहता है वहीं हमेशा आनन्द पाता है ।२५१।

एवंविधो महायुक्तः सर्वत्र वर्तते सदा ।
तस्मात्सर्वप्रकारेण गुरुभक्तिं समाचरेत् ।२५२।

ऐसा महायोग वाला पुरुष सबमें व्याप्त होता है । इससे सभी प्रकार गुरु भक्ति करनी चाहिए ।२५२।

गुरुसन्तोषणादेव मुक्तो भवति पार्वति ।
अणिमादिषु भोक्तृत्वं कृपया देवि जायते ।२५३।

प्यारी पार्वती ! गुरु जी के सन्तोष से कोई भी मुक्त हो जाता है । गुरु की कृपा से अणिमादि ऐश्वर्यों की भी प्राप्ति हो जाएगी ।२५३।

साम्येन रमते ज्ञानी दिवा वा यदि वा निशि ।
एवंविधो महामौनी त्रैलोक्यसमतां व्रजेत् ।२५४।

ज्ञानी दिन में या रात में बराबर आनन्द पाता है ऐसा महायोगी तीनों लोकों की तुल्यता का अनुभव करता है ।२५४।

अथ संसारिणः सर्वे गुरुगीताजपेन तु ।
सर्वान् कामांस्तु भुञ्जन्ति त्रिसत्यं मम भाषितम् ।२५५।

संसारी लोगों को गुरु गीता के जप से सब कामनायें प्राप्त हो जायेंगी—यह बात तीन काल का सत्य है ।२५५।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं धर्मसारं मयोदितम् ।
गुरुगीतासमं स्तोत्रं नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ।२५६।

सत्य है फिर सत्य है, फिर भी सत्य है कि सब धर्म का सार मैं कहता हूं—गुरु गीता के बराबर कोई स्रोत नहीं है, गुरु तत्व के बराबर कोई तत्व नहीं है ।२५६।

गुरुर्देवो गुरुर्धर्मो गुरौ निष्ठा परं तपः ।
गुरोः परतरं नास्ति त्रिवारं कथयामि ते ।२५७।

गुरु ही देव है, गुरु ही धर्म है, गुरु में निष्ठा ही तपस्या है, गुरु से ज्यादा कुछ भी नहीं है—मैं तुमको तीन बार बोलता हूँ ।२५७।

धन्या माता पिता धन्यो गोत्रं धन्यं कुलोद्भवः ।
धन्या च वसुधा देवि यत्र स्याद्गुरुभक्तता ।२५८।

जिस पुरुष में गुरु भक्ति है उसकी माता धन्य है, वंश धन्य है, वंश वाले धन्य है, उससे भूलोक भी धन्य होगा ।२५८।

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपःक्रियाः ।
ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसन्तोषमात्रतः ।२५९।

सारे कल्प में आनन्द और कोटि-कोटि जन्मों में जितने व्रत यज्ञ और तप किए हों गुरु के सन्तोष से ही उन सबका फल मिलेगा ।२५९।

शरीरमिन्द्रियं प्राणश्चार्थः स्वजनबन्धुता ।
मातृकुलं पितृकुलं गुरुरेव न संशयः ।२६०।

शरीर, इन्द्रिय, प्राण, धन, स्वजन और बन्धु, माता का वंश और पिता का वंश—ये सब गुरु ही है, ऐसा मानना ।२६०।

मन्दभाग्या ह्यशक्ताश्च ये जना नानुमन्वते ।
गुरुसेवासु विमुखाः पच्यन्ते नरकेऽशुचौ ।२६१।

भाग्यहीन, शक्तिहीन, और गुरु सेवा से पराङ्मुख जो लोग ऐसा नहीं मानते वे घोर नरक में पक जायेंगे ।२६१।

विद्या धनं बलं चैव तेषां भाग्यं निरर्थकम् ।
येषां गुरुकृपा नास्ति अधो गच्छन्ति पार्वति ।२६२।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवताः पितृकिन्नराः ।
सिद्धचारणयक्षाश्च अन्ये च मुनयो जनाः ।२६३।

प्यारी पार्वती ! ब्रह्म, विष्णु, रुद्र, देव, पितृ, किन्नर, सिद्ध, चारण, यक्ष और अन्य मुनि लोग—जो भी हों, जिस पर गुरु की कृपा नहीं है, उसकी विद्या, धन, बल और भाग्य सब निष्फल होगा और वह नीचे गिरेगा ।२६२-२६३।

गुरुभावः परं तीर्थमन्यतीर्थं निरर्थकम् ।
सर्वतीर्थमयं देवि श्रीगुरोश्चरणाम्बुजम् ।२६४।

गुरु भक्ति ही सबसे अच्छा तीर्थ है और दूसरे सभी तीर्थ निष्प्रयोजन हैं। प्यारी पार्वती गुरु चरण में सब तीर्थ मिले हुए हैं ।२६४।

कन्याभोगरता मन्दाः स्वकान्तायाः पराङ्मुखाः ।
अतः परं मया देवि कथितन्न मम प्रिये ।२६५।

प्यारी पार्वती ! बुद्धि शून्य लोग अपनी स्त्री को छोड़कर दूसरी स्त्री को चाहते हैं ऐसे लोगों को मैंने यह बात कभी नहीं बताई है ।२६५।

इदं रहस्यमस्पष्टं वक्तव्यं च वरानने ।
सुगोप्यं च तवाग्रे तु ममात्मप्रीतये सति ।२६६।

यह बात रहस्य भी है, सूक्ष्म भी है, गुप्त रखने के योग्य भी है, परन्तु अपनी ही प्रीति के लिए तुम्हारे सामने कहना मेरा कर्त्तव्य है ।२६६।

स्वामिमुख्यगणेशाद्यान् वैष्णवादींश्च पार्वति ।
न वक्तव्यं महामाये पादस्पर्शं कुरुष्व मे ।२६७।

गणेश आदि देवताओं को प्रधान मानने वाली और वैष्णव आदियों को भी ये बात नहीं कह देना । प्यारी, महामाया स्वरूप वाली—मेरे पैर छूकर प्रतिज्ञा करो ।२६७।

अभक्ते वञ्चके धूर्ते पाषण्डे नास्तिकादिषु ।
मनसाऽपि न वक्तव्या गुरुगीता कदाचन ।२६८।

भक्ति से रहित वन्चक, धर्म, पाखंड, नास्तिक आदि के प्रति गुरु गीता बोलने का विचार ही नहीं करना ।२६८।

गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः ।
तमेकं दुर्लभं मन्ये शिष्यहृत्तापहारकम् ।२६९।

शिष्य के धन को अपहरण करने वाले गरु बहुत हैं । शिष्य के मन ताप को हरण करने वाले बहुत कम हैं ।२६९।

चातुर्यवान् विवेकी च अध्यात्मज्ञानवान् शुचिः ।
मानसं निर्मलं यस्य गुरुत्वं तस्य शोभते ।२७०।

चतुरता, विवेक, आध्यात्म ज्ञान, शुचित्व और निर्मल मन जिसका है वही अच्छा गुरु बन सकता है ।२७०।

गुरवो निर्मलाः शान्ताः साधवो मितभाषिणः ।
कामक्रोधविनिर्मुक्ताः सदाचारा जितेन्द्रियाः ।२७१।

निर्मल, शान्त, साधु, मितभाषी, काम और क्रोध से वर्जित सदाचार वाले और जितेन्द्रिय जो है वही गुरु है ।२७१।

सूचकादिप्रभेदेन गुरवो बहुधा स्मृताः ।
स्वयं सम्यक् परीक्ष्याथ तत्त्वनिष्ठं भजेत्सुधीः ।२७२।

सूचक आदि भेद से गुरु लोग बहुत हैं । सब विचार करके तत्वनिष्ठा वाले परम गुरु को ग्रहण करना ।२७२।

वर्णजालमिदं तद्वद्बाह्यशास्त्रं तु लौकिकम् ।
यस्मिन् देवि समभ्यस्तं स गुरुः सूचकः स्मृतः ।२७३।

वर्ण या अक्षरों से सिद्ध करने का और ब्रह्म लौकिक शास्त्रों का अभ्यास जिसका है वह गुरु सूचक कहा जाता है ।२७३।

वर्णाश्रमोचितां विद्यां धर्माधर्मविधायिनीम् ।
प्रवक्तारं गुरुं विद्धि वाचकं त्विति पार्वति ।२७४।

धर्म और अधर्म को पैदा करने वाली वर्ण और आश्रम की विद्या का प्रवचन करने वाले गुरु को वाचक गुरु कहते हैं ।२७४।

पञ्चाक्षर्यादिमन्त्राणामुपदेष्टा तु पार्वति ।
स गुरुर्बोधको भूयादुभयोरयमुत्तमः ।२७५।

पञ्चाक्षरी आदि मन्त्रों को उपदेश करने वाला गुरु बोधक गुरु है पहले के दोनों की अपेक्षा यह उत्तम है ।२७५।

मोहमारणवश्यादितुच्छमन्त्रोपदर्शिनम् ।
निषिद्धगुरुरित्याहुः पण्डितास्तत्त्वदर्शिनः ।२७६।

मोह, मरण आदि तुच्छ मन्त्रों का उपदेश करने वाला निषिद्ध गुरु है ऐसा तत्वदर्शियों का कहना है ।२७६।

अनित्यमिति निर्दिश्य संसारं सङ्कटालयम् ।
वैराग्यपथदर्शी यः स गुरुर्विहितः प्रिये ।२७७।

दुःख देने वाले संसार को समझा कर वैराग्य पैदा करने वाला गुरु ही गुरु कहा जाता है ।२७७।

तत्त्वमस्यादिवाक्यानामुपदेष्टा तु पार्वति ।
कारणाख्यो गुरुः प्रोक्तो भवरोगनिवारकः ।२७८।

तत्वमसि आदि वाक्यों का उपदेश करने वाला कारण गुरु है वह संसार रूपी रोग का विनाश करता है ।२७८।

सर्वसन्देहसन्दोहनिर्मूलनविचक्षणः ।
जन्ममृत्युभयघ्नो यः स गुरुः परमो मतः ।२७९।

सब प्रकार के संदेह को जड़ से नाश करने वाला और जन्म मृत्यु के भय को दूर करने वाला गुरु ही परम गुरू है ।२७९।

बहुजन्मकृतात् पुण्याल्लभ्यतेऽसौ महागुरुः ।
लब्ध्वाऽमुं न पुनर्याति शिष्यः संसारबन्धनम् ।२८०।

अनेक जन्मों में कमाये पुण्यों से ही ऐसा परमगुरु प्राप्त होता है । उसे प्राप्त कर शिष्य फिर संसार बंधन में नहीं पड़ेगा ।२८०।

एवं बहुविधा लोके गुरवः सन्ति पार्वति ।
तेषु सर्वप्रयत्नेन सेव्यो हि परमो गुरुः ।२८१।

प्यारी पार्वती ! इस प्रकार लोक में बहु प्रकार के गुरु होते हैं। उनमें से सब प्रयत्न करके परमगुरु की सेवा करनी चाहिए ।२८१।

निषिद्धगुरुशिष्यस्तु दुष्टसङ्कल्पदूषितः ।
ब्रह्मप्रलयपर्यन्तं न पुनर्याति मर्त्यताम् ।२८२।

निषिद्ध गुरु का शिष्य होने वाला बुरे संकल्प से दूषित होने के कारण ब्रह्म प्रलय तक मनुष्य नहीं होगा जानवर आदि के जन्म में ही रहेगा ।२८२।

एवं श्रुत्वा महादेवी महादेववचस्तथा ।
अत्यन्तविह्वलमनाः शङ्करं परिपृच्छति ।२८३।

महादेव जी की यह बात सुनकर श्री पार्वती जी बहुत डरती हुई महादेव जी से पूछती हैं ।२८३।

पार्वत्युवाच—

नमस्ते देवदेवात्र श्रोतव्यं किञ्चिदस्ति मे ।
श्रुत्वा त्वद्वाक्यमधुना भृशं स्याद्विह्वलं मनः ।२८४।

पार्वती बोली—

हे देव ! देव ! आपको प्रणाम करती हूँ इस पर मैं कुछ सुनना चाहती हूँ आपकी कही बात सुन कर मेरे मन में भय लगता है ।२८४।

स्वयं मूढा मृत्युभीताः सुकृताद्विरतिं गताः ।
दैवान्निषिद्धगुरुगा यदि तेषां तु का गतिः ।२८५।

प्रकृत्या मूढ़ मरण से भीत और सुकृत से विलीन लोग दैवयोग से निषिद्ध गुरु को प्राप्त होवें तो उसकी गति का क्या होगा ? ।२८५।

श्री महादेव उवाचः—

शृणु तत्त्वमिदं देवि यदा स्याद्विरतो नरः ।
तदाऽसावधिकारीति प्रोच्यते श्रुतमस्तकैः ।२८६।

महादेव जी बोले—

उपनिषदों के इस तत्व को सुनो, जो मनुष्य विषय में विरक्त है वही गुरु को चुनने में अधिकार वाला होता है। तात्पर्य यह है कि दैवयोग से प्राप्त होने की बात अलग है। विचार से चुनने की बात अलग है ।२८६।

अखण्डैकरसं ब्रह्म नित्यमुक्तं निरामयम् ।
स्वस्मिन् सन्दर्शितं येन स भवेदस्य देशिकः ।२८७।

अखण्ड एक रस नित्यमुक्त और निरामय ब्रह्म को अपने ही में जो दिखाता है वही गुरु होना चाहिए ।२८७।

जलानाँ सागरो राजा यथा भवति पार्वति ।
गुरूणाँ तत्र सर्वेषाँ राजायं परमो गुरुः ।२८८।

प्यारी पार्वती ! सब पानियों का जैसा समुद्र राजा है। उसी प्रकार गुरुओं का परमगुरु राजा है ।२८८।

मोहादिरहितः शान्तो नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
तृणीकृतब्रह्मविष्णुवैभवः परमो गुरुः ।२८९।

मोह आदि दोषों से रहित शान्त हमेशा सन्तृप्त किसी का आश्रय नहीं लेने वाला और ब्रह्मा और विष्णुदेव के वभव को भी तृणवत मानने वाला ही परमगुरु है ।२८९।

सर्वकालविदेशेषु स्वतन्त्रो निश्चलस्सुखी ।
अखण्डैकरसास्वादतृप्तो हि परमो गुरुः ।२९०।

सब काल और देश में स्वतन्त्र, निश्चल, सुखी और अखण्ड, एक रस के आनन्द से सन्तृप्त ही परम गुरु है ।२९०।

द्वैताद्वैतविनिर्मुक्तः स्वानुभूतिप्रकाशवान् ।
अज्ञानान्धतमश्छेत्ता सर्वज्ञः परमो गुरुः ।२९१।

द्वैत और अद्वैत के बाहर अपना अनुभव रूप प्रकाश वाला अज्ञान रूप अन्धेरे को काटने वाला और सर्वज्ञ ही परमगुरु है ।२९१।

यस्य दर्शनमात्रेण मनसः स्यात् प्रसन्नता ।
स्वयं भूयात् धृतिश्शान्तिः स भवेत् परमो गुरुः ।२९२।

जिसको देखते ही मन को प्रसन्नता धैर्य और शान्ति हो जाती है वही परमगुरु है ।२९२।

सिद्धिजालं समालोक्य योगीनाँ मन्त्रवादिनाम् ।
तुच्छाकारमनोवृत्तिर्यस्यासौ परमो गुरुः ।२९३।

योगियों और मन्त्रवादियों की सिद्धियों को देखकर जिसकी मनोवृत्ति तुच्छाकार हो जाती है वही परमगुरु है ।२९३।

स्वशरीरं शवं पश्यन् तथा स्वात्मानमद्वयम् ।
यः स्त्रीकनकमोहघ्नः स भवेत् परमो गुरुः ।२९४।

अपने शरीर को शव समझकर और अपनी आत्मा को अद्वय समझ कर जो स्त्री की और कनक की इच्छा नहीं करता है वही परम गुरु है ।२९४।

मौनी वाग्मीति तत्त्वज्ञो द्विधाभूच्छृणु पार्वति ।
न कश्चिन्मौनिना लाभो लोकेऽस्मिन्भवति प्रिये ।२९५।

प्यारी पार्वती ! सुनो कि तत्वज्ञ दो प्रकार के हैं—एक मौनी और दूसरा वाग्मी। इनमें मौनी से लोगों को कुछ लाभ नहीं है ।२९५।

वाग्मी तूत्कटसंसारसागरोत्तारणक्षमः ।
यतोऽसौ संशयच्छेत्ता शास्त्रयुक्त्यनुभूतिभिः ।२९६।

वाग्मी तो भयंकर संसार समुद्र को पार कराने में समर्थ है क्योंकि शास्त्र युक्ति और अनुभव से वह सब संशयों को काटने वाला है ।२९६।

गुरुनामजपाद्देवि बहुजन्मार्जितान्यपि ।
पापानि विलयं यान्ति नास्ति सन्देहमण्वपि ।२९७।

बहुत जन्मों में, किये हुए सब पाप भी गुरु के नाम जपने से ही नष्ट हो जाता है। इस में शंका नहीं ।२९७।

श्रीगुरोस्सदृशं दैवं श्रीगुरोस्सदृशः पिता ।
गुरुध्यानसमं कर्म नास्ति नास्ति महीतले ।२९८।

गुरु के समान कोई देवता, गुरु के समान कोई पिता और गुरु के ध्यान के समान कोई कर्म भूलोक में नहीं है ।२९८।

कुलं धनं बलं शास्त्रं बान्धवास्सोदरा इमे ।
मरणे नोपयुज्यन्ते गुरुरेको हि तारकः ।२९९।

अपना वंश धन, बल, शास्त्र और बन्धु जन, ये सब मरण के अवसर पर कुछ काम नहीं आते। केवल गुरु ही रक्षा करने वाला है ।२९९।

कुलमेव पवित्रं स्यात् सत्यं स्वगुरुसेवया ।
तृप्ताः स्युस्सकला देवा ब्रह्माद्या गुरुतर्पणात् ।३०० ।

गुरु की सेवा से अपना कुल भी पवित्र होगा। ब्रह्मा आदि सब देवताओं में गुरु की तृप्ती करने से तृप्त होगी ।३००।

गुरुरेको हि जानाति स्वरूपं दैवमव्ययम् ।
तज्ज्ञानं यत्प्रसादेन नान्यथा शास्त्रकोटिभिः ।३०१।

अपने अनश्वर दिव्य स्वरूप को गुरु ही जानता है। गुरु की कृपा से ही उस स्वरूप का ज्ञान होगा। कोटि-२ शास्त्रों से भी न होगा ।३०१।

स्वरूपज्ञानशून्येन कृतमप्यकृतं भवेत् ।
तपोजपादिकं देवि सकलं बालजल्पवत् ।३०२।

जिसका स्वरूप ज्ञान नहीं है, उसके किए हुए जप - तप आदि सब कर्म बच्चों के बकने की तरह फिजूल होंगे ।३०२।

शिवं केचिद्धरिं केचिद्विधिं केचित्तु केचन ।
शक्तिं दैवमिति ज्ञात्वा विवदन्ति वृथा नराः ।३०३।

कोई शिव को, कोई विष्णु को कोई ब्रह्मा को और कोई शक्ति को देव समझ कर व्यर्थ विवाद कर रहे हैं ।३०३।

न जानन्ति परं तत्त्वं गुरुदीक्षापराङ्मुखाः ।
भ्रान्ताः पशुसमा ह्येते स्वपरिज्ञानवर्जिताः ।३०४।

जो लोग गुरुदीक्षा करने में तत्पर नहीं हैं वे पशु के समान हैं भ्रान्त हैं अपने को नहीं जानते हैं और परम तत्व को नहीं जानते ।३०४।

तस्मात्कैवल्यसिद्ध्यर्थं गुरुमेव भजेत्प्रिये ।
गुरुं विना न जानन्ति मूढास्तत्परमं पदम् ।३०५।

इस से प्यारी पार्वती कैवल्य सिद्धि के लिए गुरु का ही भजन करना। गुरु नहीं हो तो मूढ़ लोग उस परम पद को नहीं समझ सकते ।३०५।

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते सर्वकर्माणि गुरोः करुणया शिवे ।३०६।

गुरु की कृपा से हृदय की गांठ (ग्रन्थि) छिन्न हो जाती है सब संशय कट जाता है और सब कर्म नष्ट होते हैं ।३०६।

कृताया गुरुभक्तेस्तु वेदशास्त्रानुसारतः ।
मुच्यते पातकाद्घोराद्गुरुभक्तो विशेषतः ।३०७।

वेद शास्त्रों के अनुसार विशेष रूप से गुरु की भक्ति करने से गुरु का भक्त घोर पापों से भी मुक्त हो जाता है ।३०७।

दुःसंगं च परित्यज्य पापकर्म परित्यजेत् ।
चित्तचिह्नमिदं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते ।३०८।

जिस के मन में दुर्जनों का संग और पाप कर्म के परित्याग का निभाना देखा जाता है, उसके लिए गुरुदीक्षा विदित है ।३०८।

चित्तत्यागनियुक्तश्च क्रोधगर्वविवर्जितः ।
द्वैतभावपरित्यागी तस्य दीक्षा विधीयते ।३०९।

चित्त को चिन्ताओं का त्याग करने वाले, क्रोध और गर्व न करने वाले द्वैत भाव को छोड़ने वाले को गुरु दीक्षा विदित है ।३०९।

एतल्लक्षणसंयुक्तं सर्वभूतहिते रतम् ।
निर्मलं जीवितं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते ।३१०।

इन लक्षणों के साथ सब जीवों का हित करना और निर्मल जीवन जिसका है उसकी गुरुदीक्षा विदित है ।३१०।

क्रियया चान्वितं पूर्वं दीक्षाजालं निरूपितम् ।
मन्त्रदीक्षाभिधं सांगोपांगं सर्वं शिवोदितम् ।३११।

कर्मों के साथ वाली कर्मदीक्षा और मंत्रदीक्षा—इन दोनों का सविस्तार पहले ही कर चुका है ।३११।

क्रियया स्याद्विरहितां गुरुसायुज्यदायिनीम् ।
गुरुदीक्षां विना को वा गुरुत्वाचारपालकः ।३१२।

गुरु सायूज्य को देने वाली और क्रिया के बिना होने वाली गुरु दीक्षा के बिना गुरुत्व के आचार को कौन पालन कर सकता है ? ।३१२।

शक्तो न चापि शक्तो वा दैशिकांघ्रिसमाश्रयात् ।
तस्य जन्मास्ति सफलं भोगमोक्षफलप्रदम् ।३१३।

चाहे शक्त हो या अशक्त—गुरु पद के आश्रय से जन्म सफल हो जायेगा । योग और मोक्ष दोनों फल मिलेगा ।३१३।

अत्यन्तचित्तपक्वस्य श्रद्धाभक्तियुतस्य च ।
प्रवक्तव्यमिदं देवि ममात्मप्रीतये सदा ।३१४।

जिस का चित्त अत्यन्त पक्व है और जिस में श्रद्धा और भक्ति रहती है उससे यह तत्व बताने में मुझे प्रीति होगी ।३१४।

रहस्यं सर्वशास्त्रेषु गीताशास्त्रमिदं शिवे ।
सम्यक्परीक्ष्य वक्तव्यं साधकस्य महात्मनः ।३१५।

यह गीता सब शास्त्रों से अधिक रहस्य है । महात्मा साधकों को खूब परीक्षा करके बताना ।३१५।

सत्कर्मपरिपाकाच्च चित्तशुद्धिस्य धीमतः ।
साधकस्यैव वक्तव्या गुरुगीता प्रयत्नतः ।३१६।

सत्कर्म के परिपाक से चित्तशुद्धि प्राप्त होने पर ही यत्न करके साधक को गुरु गीता बता देना ।३१६।

नास्तिकाय कृतघ्नाय दाँभिकाय शठाय च ।
अभक्ताय विभक्ताय न वाच्येयं कदाचन ।३१७।

नास्तिक, कृतघ्न, दंभ करने वाला, गुरु भक्तिहीन और विरोध करने वाल. इनसे गुरु गीता कभी न कहना ।३१७।

स्त्रीलोलुपाय मूर्खाय कामोपहतचेतसे ।
निन्दकाय न वक्तव्या गुरुगीता स्वभावतः ।३१८।

स्त्रियों से आसक्त, मूर्ख मन में वासना रखने वाला और निन्दा करने वाला, इनसे गुरु गीता कभी न कहना ।३१८।

सर्वपापप्रशमनं सर्वोपद्रववारकम् ।
जन्ममृत्युहरं देवि गीताशास्त्रमिदं शिवे ।३१९।

यह गीता शास्त्र सब पापों का शमन करने वाला है, सब उपद्रव मिटाने वाला है, जन्म और मरण का निवारण करने वाला है ।३१९।

श्रुतिसारमिदं देवि सर्वमुक्तं समासतः ।
नान्यथा सद्गतिः पुंसां विना गुरुपदं शिवे ।३२०।

सर्व वेदों का यह सार संक्षेप में कह दिया है। गुरु पद के सिवा मर्त्य की कोई सद्गति नहीं है ।३२०।

बहुजन्मकृतात्पापादयमर्थो न रोचते ।
जन्मबन्धनिवृत्त्यर्थं गुरुमेव भजेत्सदा ।३२१।

बहुत जन्मों में किए हुए पाप के कारण यह तत्व किसी को समझ में नहीं आयेगा । जन्म बन्धन की निवृत्ति के लिए गुरु की ही सेवा करनी चाहिए ।३२१।

अहमेव जगत्सर्वं अहमेव परं पदम् ।
एतज्ज्ञानं यतो भूयात्तं गुरुं प्रणमाम्यहम् ।३२२।

सारा जगत मैं ही हूं, परम परमेश्वर मैं ही हूं—ऐसा ज्ञान जिससे होगा उस गुरु को मैं नमस्कार करता हूँ ।३२२।

अलं विकल्पैरहमेव केवलो मयि स्थितं विश्वमिदं चराचरम् ।
इदं रहस्यं मम येन दर्शितं स वन्दनीयो गुरुरेव केवलम् ।३२३।

कुछ भी विकल्प नहीं करना । मैं केवल अक्षय हूं, मुझमें यह चराचर विश्व स्थित है—यह रहस्य जिसने दिखाया है केवल उस गुरु की ही वन्दना कर रहा हूँ ।३२३।

यस्यान्तं नादिमध्यं न हि करचरणं नामगोत्रं न सूत्रं ।
नो जातिर्नैव वर्णो न भवति पुरुषो नो नपुंसं न च स्त्री ।३२४।
नाकरं नो विकारं न हि जनिमरणं नास्ति पुण्यं न पापं ।
नोऽतत्त्वं तत्त्वमेकं सहजसमरसं सद्गुरुं तं नमामि ।३२५।

जिसका अन्त नहीं, आदि नहीं, मध्य नहीं, हाथ, पैर, नाम, गोत्र, सूत्र, जाति और वर्ण भी नहीं, जो पुरुष नहीं, स्त्री नहीं है नपुंसक भी नहीं है, जिसका आकार विकार, जन्म, मरण, पुण्य और पाप भी नहीं है, जो अतत्व नहीं है किन्तु सहज और समरस एक तत्व है उस सद्गुरु को नमस्कार करता हूं ।३२४-३२५।

नित्याय सत्याय चिदात्मकाय नव्याय भव्याय परात्पराय ।
शुद्धाय बुद्धाय निरञ्जनाय नमोऽस्तु नित्यं गुरुशेखराय ।३२६।

जो नित्य है, सत्य है, चित्त स्वरूप है, नया है, मंगल करने वाला है शुद्ध है बुद्ध है और पाप रहित है उस उत्तम गुरु को प्रणाम करता हूँ ।३२६।

सच्चिदानन्दरूपाय व्यापिने परमात्मने ।
नमः श्री गुरुनाथाय प्रकाशानन्दमूर्तये ।३२७।

सच्चिदानन्द स्वरूप व्यापक परमात्मा स्वरूप और प्रकाश आनन्द स्वरूप श्री गुरु नाथ को प्रणाम ।३२७।

सत्यानन्दस्वरूपाय बोधैकसुखकारिणे।
नमो वेदान्तवेद्याय गुरवे बुद्धिसाक्षिणे ।३२८।

सत्य आनन्द स्वरूप वाले बोध रूप सुख देने वाले वेदान्त से समझे जाने वाले और बुद्धि का साक्षी देने वाले गुरु जी को प्रणाम ।३२८।

नमस्ते नाथ भगवन् शिवाय गुरुरूपिणे ।
विद्यावतारसंसिद्धयै स्वीकृतानेकविग्रह ।३२९।

हे भगवान गुरुनाथ जी विद्या का प्रकाशन करने के लिए जिसने अनेक बार शरीर धारण कर लिया है उस शिव स्वरूपी आप को प्रणाम ।३२९।

नवाय नवरुपाय पारमार्थैकरूपिणे ।
सर्वाज्ञानतमोभेदभानवे चिद्घनाय ते ।३३०।

नया-नया रूप धारण करने वाले, परमार्थ स्वरूप वाले और अज्ञान रूप अन्धकार में सूरज के समान होने वाले आपको नमस्कार ।३३०।

स्वतन्त्राय दयाक्लृप्तविग्रहाय शिवात्मने ।
परतन्त्राय भक्तानां भव्यानाँ भव्यरूपिणे ।३३१।

जो स्वतन्त्र है शिव स्वरूप है जिसका शरीर दया से बना है, जो भक्तों में परतंत्र है भव्यों का भव्य भी है उनको नमस्कार ।३३१।

विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनाम् ।
प्रकाशिनां प्रकाशाय ज्ञानिनां ज्ञानरूपिणे ।३३२।

विवेकियों का विवेक, विमर्श करने वालों का विमर्श, प्रकाशों का प्रकाश और ज्ञानियों का ज्ञान जो है उस आप को नमस्कार ।३३२।

पुरस्तात्पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यादुपर्यधः ।
सदा मच्चित्तरूपेण विधेहि भवदासनम् ।३३३।

आगे, बगल में, पीछे और ऊपर भी आपको प्रणाम करें सत और चित्त के रूप में हमेशा बैठें ।३३३।

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दे ह्यानन्दविग्रहम् ।
यस्य सन्निधिमात्रेण चिदानन्दायते मनः ।३३४।

जिसके नजदीक रहने से ही मन चिदानन्द हो जाता है, उस आनन्द स्वरूप परमानन्द श्री गुरु की वन्दना करता हूँ ।३३४।

नमोऽतु गुरवे तुभ्यं सहजानन्दरूपिणे ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ।३३५।

जिसकी वाक् रूपी अभय से संसार रूप विष का नाश होता है ऐसे सहज स्वरूप गुरु महाराज ! आपको प्रणाम ।३३५।

नानायुक्तोपदेशेन तारिता शिष्यसन्ततिः
तत्कृपासारवेदेन गुरुचित्पदमच्युतम् ।३३६।

अनेक युक्ति युक्त उपदेशों से शिष्य को गुरु ही संसार से पार करता है। गुरु की कृपा समझ कर शिष्य लोग गुरु स्वरूप अनश्वर चित्प्रकाश प्राप्त करते हैं ।३३६।

अच्युताय नमस्तुभ्यं गुरवे परमात्मने ।
स्वारामोक्तपदेच्छूनां दत्तं येनाच्युतं पदम् ।३३७।

आत्माराम पद की इच्छा करने वालों को जो वह अनश्वर पद देता है, परमात्मा स्वरूप उस अनश्वर गुरु को मेरा नमस्कार ।३३७।

नमोऽच्युताय गुरवेऽज्ञानध्वान्तैकभानवे ।
शिष्यसन्मार्गपटवे कृपापीयूषसिन्धवे ।३३८।

जो अनश्वर है, अज्ञान रूपी अन्धकार में सूर्य है, शिष्य को सन्मार्ग दिखाने वाला है, कृपा रूप अमृत का स्वरूप है उस सद्गुरु को प्रणाम ।३३८।

ओमच्युताय गुरवे शिष्यसंसारसेतवे ।
भक्तकार्यैकसिंहाय नमस्ते चित्सुखात्मने ।३३९।

हे गुरु जी आप अनश्वर हैं शिष्य को संसार पार कराने वाले हैं भक्तों के कार्य को सिद्ध करने वाले हैं जो चिदानन्द स्वरूप है उनको नमस्कार ।३३९।

गुरुनामसमं दैवं न पिता न च बान्धवाः ।
गुरुनामसमः स्वामी नेदृशं परमं पदम् ।३४०।

गुरु नाम के समान देव नहीं, पिता नही बन्धु नहीं, स्वामी नहीं। और परमपद भी नहीं ।३४०।

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुं नैव मन्यते ।
श्वानयोनिशतं गत्वा चाण्डालेष्वपि जायते ।३४१।

एकाक्षर मन्त्र उपदेश करने वाले को जो गुरु नहीं मानता वह सौ जन्म में कुत्ता होगा और फिर चण्डाल होगा ।३४१।

गुरुत्यागाद्भवेन्मृत्युर्मन्त्रत्यागाद्दरिद्रता ।
गुरुमन्त्रपरित्यागी रौरवं नरकं व्रजेत् ।३४२।

गुरु को छोड़ने से मृत्यु होगी। मन्त्र को छोड़ने से दरिद्रता होगी। गुरु और मन्त्र को छोड़ने से गैरव नरक मिलेगा ।३४२।

शिवक्रोधाद्गुरुस्त्राता गुरुक्रोधाच्छिवो न हि ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन गुरोराज्ञां न लंघयेत् ।३४३।

शिव जो कुपित हो तो गुरु की रक्षा करेंगे, गुरु जी कुपित हो तो शिव जी भी रक्षा नहीं कर सकते। इसलिए गुरु की आज्ञा कभी नहीं टालना ।३४३।

संसारसागरसमुद्धरणैकमन्त्रं ब्रह्मादिदेवमुनिपूजित
सिद्धमन्त्रम् ।
दारिद्र्यदुःखभवरोगविनाशमन्त्रं वन्दे महाभयहरं
गुरुराजमन्त्रम् ।३४४।

जो संसार समुद्र को पार करने का मंत्र है, जो ब्रह्मा आदि द्वारा पूजनीय सिद्ध मंत्र है, जो दारिद्रय और संसार को नाश करने वाला मंत्र है सब भय को हरण करने वाले उस गुरु राज मन्त्र को वन्दना करता हूँ ।३४४।

सप्तकोटिमहामन्त्राश्चित्तविभ्रंशकारकाः ।
एक एव महामन्त्रो गुरुरित्यक्षरद्वयम् ।३४५।

सात करोड़ महामन्त्र जो लोक में विद्यमान हैं वे सब मन का विक्षेप करने वाले हैं। गुरु नाम का दो अक्षर का मन्त्र एक ही सच्चा महामन्त्र है ।३४५।

एवमुक्त्वा महादेवः पार्वतीं पुनरब्रवीत् ।
इदमेव परं तत्त्वं शृणु देवि सुखावहम् ।३४६।

महादेव जी इतना कह कर पार्वती जी से फिर बोले, मैंने जो कहा है वही परम तत्व है परम सुख देने वाला है ।३४६।

गुरुतत्त्वमिदं देवि सर्वमुक्तं समासतः ।
रहस्यमिमदव्यक्तं न वदेद्यस्य कस्यचित् ।३४७।

सारा गुरु तत्व संक्षेप में कहा है यह गुप्त रहस्य है जिसे किसी से नहीं कहना चाहिए ।३४७।

न मृषा स्यादियं देवि मदुक्तिः सत्यरूपिणी ।
गुरुगीतासमं स्तोत्रं नास्ति नास्ति महीतले ।३४८।

मेरा यह कहना कभी झूठ न होगा। वह सत्य स्वरूप है, गुरु गीता के समान जगत में कुछ भी नहीं है ।३४८।

गुरुगीतामिमां देवि भवदुःखविनाशिनीम् ।
गुरुदीक्षाविहीनस्य पुरतो न पठेत्क्वचित् ः ।३४९।

संसार दुःख का नाश करने वाली इस गुरुगीता की गुरु दीक्षा जिसने नहीं ली है उसके सामने कभी नहीं पढ़ना ।३४९।

रहस्यमत्यन्तरहस्यमेतन्न पापिना लभ्यमिदं महेश्वरि ।
अनेकजन्मार्जितपुण्यपाकाद्गुरोस्तु तत्त्वं लभते मनुष्यः ।३५०।

यह रहस्य अत्यन्त गुप्त रहस्य है। यह गुरु तत्व पापियों को नहीं मिलेगा। अनेक जन्मों के किए हुए पुण्य से ही मानव लोग गुरु का तत्व प्राप्त कर सकते हैं ।३५०।

यस्य प्रसादादहमेव सर्वं मय्येव सर्वं परिकल्पितं च ।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं तस्यांघ्रिपद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ।३५१।

मैं ही सर्व हूं मुझ में ही सब कल्पित है ऐसा ज्ञान जिसकी कृपा से हो गया है उस आत्मस्वरूप गुरु पद को प्रणाम करता हूँ।३५१।

अज्ञानतिमिरान्धस्य विषयाक्रान्तचेतसः ।
ज्ञानप्रभाप्रदानेन प्रसादं कुरु मे प्रभो ।३५२।

हे प्रभो ! में अज्ञान के तिमिर से अन्धा हो और जिसका मन विषयों से घिरा है उस मुझ को ज्ञान का प्रकाश प्रदान करें।३५२।

॥ इति श्रीस्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वरसंवादे
श्री गुरुगीतायां तृतीयोऽध्यायः ॥

इसी प्रकार श्री स्कान्दोत्तरखण्ड में पार्वती-शिव संवाद में श्री गुरुगीता समाप्ता ।

॥ शुद्धिपत्रम् ॥

—★—

पेज	श्लोक	लाईन	अशुद्ध	शुद्ध
१	२	१	रुपाय	रूपाय
१	२	३	रुपमस्मा	रूप
१४	५६	१	राभिष्टं	राविष्टं
२०	८०	१	बिन्धु	बन्धु
२३	९४	१	रुपं	रूपं
२५	९९	२	करणौ	करणै
३७	१४२	१	गुरा	गुरो
३९	१५०	३	शापोपपत्रस्य	शापोपपन्नस्य
४९	१९१	१	व्यधीता	प्यधीता
५२	२०३	३	एम्यो	एभ्यो
५४	२११	४	भश्नुते	मश्नुते
५५	२१५	१	चैव	डीलीट
६०	२३५	३	शवाः	शैवाः
७३	२८५	३	निषिदू	निषिद्ध
८०	३१६	२	शुद्धिस्य	शुद्धस्य